मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई – पत्रिका

वर्ष:3 । अंक:10 । पृष्ठ:60 । मूल्य:नि:शुल्क । इंदौर–उज्जैन । सोमवार 1 मई 2023 । वैशाख/ज्येष्ठ मास (3), विक्रम संवत् 2080 । इ.संस्करण

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

उपसम्पादक
श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा (लखनऊ)
सुश्री इंदु सिंह "इन्दुश्री" (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

• गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
• पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
• समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुतंला कालरा	03
2	हम सब चौकीदार की नज़र...	डॉ. सन्तोष खन्ना	05
3	मैं का रिश्ता सबसे अनमोल	आकांक्षा यादव	08
4	माँ	श्रीमती शोभा रानी तिवारी	10
5	वेदामृत मंथन	डॉ. अलका शर्मा	11
6	गणपति वंदना	डॉ. निशा नंदिनी भारतीय	13
7	वैदिक विमान विज्ञान...	डॉ. विदुषी शर्मा	14
8	महर्षि भृगु	प्रो. (डॉ.) दिग्विजय कुमार शर्मा	16
9	सुंदरकाण्ड में निहित प्रतीकार्थ...	डॉ. शकुतंला कालरा	20
10	हार्ट अटैक	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	22
11	पर्यावरण चिन्तन 4	डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह	24
12	प्रथम पत्रकार देवर्षि नारद	श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा	25
13	चुनरी	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	27
14	वनस्पति सम्पदा को....	डॉ. शारदा मेहता	28
15	कवींद्र – रवींद्र और उनके विमर्श	कृष्ण कुमार यादव	32
16	क्या है भारतीय संस्कृति में...	पंडित कैलाशनारायण	35
17	दर्द, ध्यान, स्पर्श और रेकी	सीताराम गुप्ता	37
18	श्री राम द्वारा स्थापित शिवधाम...	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	39
19	योग माया पराशक्ति सीता	डॉ. अर्चना प्रकाश	41
20	हनुमत् चरित्र	ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र	42
21	कुछ अलग है पशुपतिनाथ...	संतोष बंसल	43
22	महत चिंतन श्रृंखला	विजय कुमार तिवारी	47
23	श्रम से जीवन का रंग बदलते...	लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	49
24	भगीरथ की तपस्या का फल...	सुश्री इंदु सिंह 'इंदु श्री'	50
25	निर्जला एकादशी	भावना दामले	52
26	सक्षमता का वास्तविक स्वरुप...	डॉ. अजय शुक्ला	54
27	उम्मीद	डॉ. अलका यतींद्र यादव	57
28	प्रभु राम और आज के युग...	विरेंदर 'वीर' मेहता	58
29	जैसा देश वैसा भेष	सोनल मंजू श्री ओमर	60

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)

शुभकामनाओं के साथ आप सभी शब्द-साधकों को मेरा सादर अभिवादन।

पर्व-त्योहारों के देश में हर मास पर्व-त्योहारों का मेला लगता है। इस माह भी बहुत बड़े त्योहार आ रहे हैं। हर साल की भाँति पहली मई को देश-दुनिया में मजदूर दिवस मनाया जाएगा। मजदूरों और श्रमिकों को सम्मान देने के उद्देश्य से हर साल एक मई का दिन इनको समर्पित होता है। जिसे लेबर डे, श्रमिक दिवस, मजदूर दिवस, मई डे के नाम से जाना जाता है। मजदूर दिवस का दिन ना केवल श्रमिकों को सम्मान देने के लिए होता है बल्कि इस दिन मजदूरों के हक के प्रति आवाज भी उठाई जाती है। जिससे कि उन्हें समान अधिकार मिल सके। श्रमिक दिवस यह दिन अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक दिवस के रूप मे मनाया जाता है। इस माह में आने वाले पर्व-त्योहारों में सबसे पहला त्योहार है- बुध पूर्णिमा । इसे वैशाख पूर्णिमा के नाम से भी जाना जाता है, इस दिन के बाद वैशाख स्नान समाप्ति हो जाती है। दुनिया भर में बौद्ध धर्म के अनुयायियों के लिए भी बुद्ध पूर्णिमा सबसे महत्वपूर्ण त्योहार है। यह शुभ दिन बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध के जन्म, ज्ञान और मृत्यु का प्रतीक है, और बौद्ध संप्रदायों द्वारा बहुत उत्साह के साथ मनाया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि गौतम बुद्ध के जीवन की तीनों महत्वपूर्ण घटनाएं - उनका जन्म, ज्ञान और मोक्ष - वर्ष के एक ही दिन आते हैं। इस घटना के कारण, बौद्ध धर्म में इस दिन का अत्यधिक महत्व है। इस माह की पहली जयंती रविन्द्रनाथ ठाकुर जयंती है, जो 8 मई को है। विश्वसाहित्य के विशिष्ट सर्जकों में रवीन्द्रनाथ टैगोर का स्थान शीर्ष पर है। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी रवीन्द्रनाथ टैगोर की साहित्यिक प्रतिभा एक साथ महान कवि, कथा-शिल्पी, चिंतक, गायक, चित्रकार, अध्यापक के रूप में उद्भासित हुई है। वे अपने जीते जी बांग्ला साहित्येतिहास और बांग्ला समाज के साथ-साथ देश के गौरव बन चुके थे। उन्होंने एक हज़ार से भी अधिक कविताएं लिखीं और दो हज़ार से भी अधिक गीतों की रचना की। इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेक कहानियां, उपन्यास, नाटक तथा धर्म, शिक्षा, दर्शन, राजनीति और साहित्य के विविध विषयों से संबंधित निबंध लिखे। एक महाकवि के रूप में प्रतिष्ठित रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'गीतांजलि' जैसी महानतम कृति की रचना की जिसके लिए उन्हें वर्ष 1913 में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस पुरस्कार को प्राप्त करने वाले वह पहले एशियाई थे। विश्व रैड्क्रॉस दिवस भी इसी दिन है। वर्ल्ड रेड क्रॉस डे का मुख्य उद्देश्य असहाय और घायल सैनिकों और नागरिकों की रक्षा करना है। यह दिवस 8 मई को हेनरी डुनेंट की जयंती पर मनाया जाता है, जो रेड क्रॉस की अंतर्राष्ट्रीय समिति के संस्थापक थे। मानवता की सहायता के लिए अभूतपूर्व योगदान के लिए श्रद्धांजलि देने के लिए याद करते हैं। कुछ दिन हमारे इतिहास से जुड़े होते हैं। महाराणा प्रताप जयंती उनमें से एक है। महाराणा प्रताप अपराजित योद्धा थे, जो अकबर जैसे शक्तिशाली तुर्क के साथ 1576 से 1590 तक सतत् युद्ध लड़ते रहे। हल्दीघाटी का युद्ध अकबर और महाराणा प्रताप के मध्य पहला युद्ध था, अंतिम नहीं। इस पहले युद्ध में दोनों सेनाओं की बराबर क्षति हुई। 1577 से 1584 तक

समय-समय पर अकबर अपनी सैनिक टुकड़ियों को महाराणा प्रताप से लड़ने भेजता रहा। किंतु सब निराश और हताश लौटती रहीं। 1585 से महाराणा प्रताप मुगलों से अपने दुर्ग मुक्त करने में सफल हुए। अकबर ने यह स्वीकार कर लिया कि महाराणा प्रताप को पराजित करना या पकड़ना असंभव है। अकबर को महाराणा प्रताप को झुकाने के लिए कूटनीतिक अभियानों में भी पराजय हाथ लगी। मुगलों से वह पराजित तो नहीं हुए देश रक्षा के लिए लड़ते रहे। वह देशभक्ति और राष्ट्रीय स्वाभिमान के प्रतीक हैं।

दिवसों की अगली कड़ी में गुरु अर्जुनदेव शहीद दिवस है, जो इस माह की 26 तारीख को है। गुरु अर्जन देव जी ग्यारह सिख गुरुओं के पांचवें गुरु थे। गुरु अर्जन देव के द्वारा किए गए सबसे महत्वपूर्ण कामों में से एक था "आदि ग्रंथ" का संकलन। उन्होंने पहले चार गुरुओं के सभी कार्यों को इकट्ठा किया और उन्हें 1604 में छंद के रूप में लिखा। उन्होंने अपने संकलन में भक्ति काल के कई संतों की शिक्षाओं को भी जोड़ा। मृत्यु से पहले गुरु अर्जन देव ने अपने बेटे गुरु हर गोलबद को अगले गुरु के रूप में घोषित किया। उन्होंने अमृतसर शहर का निर्माण कराया तथा साथ ही तारन और करतारपुर जैसे अन्य शहरों की भी स्थापना की।

वीर सावरकर जयंती का दिन भी हमारे इतिहास से जुड़ा है, जो पूरे भारत में उनके जन्मदिन के रूप में मनाया जाता है। भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों के रूप में जाने जाने वाले सावरकर को देश भर में लहदू समुदाय के विकास के लिए कई गतिविधियों को करने के लिए जाना जाता है। उनके जन्मदिन का जश्न मनाया जाता. है। पूरे महाराष्ट्र में उनके जन्मदिन पर उनके जीवन की घटनाओं को याद करते हुए उन्हें भव्य तरीके से सम्मानित करने के लिए कई कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। अगले ही दिन झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की पुण्यतिथि है। मातृभूमि की रक्षा के लिए हंसते-हंसते अपने प्राणों को न्योछावर करने वाली इतिहास की महान वीरांगना झांसी की रानी लक्ष्मीबाई आखिरी दम तक अंग्रेजों से लोहा लेती रही। अंग्रेजी सरकार को अपनी झांसी नहीं सौंपी और उनके साथ युद्ध किया। वह अपने दत्तक पुत्र दामोदर को पीठ पर बांधे अपने प्रिय घोड़े की पीठ पर बैठ कालपी पहुंची जहां रानी का अंग्रेजी फौज से भीषण संघर्ष हुआ था। अंग्रेजों ने उसकी पीठ पर वार किया और रानी को ढेर कर दिया। इस क्रांति बाला के लिए देश कृतज्ञ है। महीने के अंत में महेश जयंती है। यह दिन महेश्वरी समाज कें शिवभक्तों द्वारा त्योहार के रूप में मनाया जाता है। भगवान शिव के वरदान स्वरूप महेश्वरी समाज की उत्पत्ति मानी गई है। माना जाता है कि महेश स्वरूप में आराध्य भगवान 'शिव' पृथ्वी से भी ऊपर कोमल कमल पुष्प पर बेलपत्ती, त्रिपुंड, त्रिशूल, डमरू के साथ ललग रूप में शोभायमान होते हैं। सभी ज्ञानी, भक्तों, संतों और विचारकों के विचार उनके आदर्श हमारा मार्ग प्रशस्त करें। आज़ादी की लड़ाई में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर जिन्होंने इतिहास रचा, वे क्रांतिकारी जिन्होंने शहादात दी, अपने प्राणों का हँसते-हँसते उत्सर्ग किया और फाँसी पर झूल गए ऐसे सच्चे देशभक्तों की देशभक्ति उनका देशप्रेम हर देशवासी के लिए प्रेरणा का स्रोत बने।

आप इस माह में आने वाले इन सभी त्योहारों को प्रसन्नतापूर्वक मनाएं। इसी मंगल कामना के साथ आपकी सेवा में सदैव सहर्ष तत्पर आपकी-

-शकुंतला कालरा

हम सब चौकीदार की नज़र में हैं

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ सम्पादक (अध्यात्म संदेश)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

सबसे पहला चौकीदार तो दुनिया का मालिक है। कोई लाखों करोड़ों की संपत्ति जमा कर ले या किसी का धन चोरी कर ले तो भी मजाल है वह उस में से यहां से एक पैसा भी साथ ले जा सके। मनुष्य ऊंचे ऊंचे महल चौबारे, वैभवशाली फार्म हाउस और तरह तरह के विलक्षण निर्माण करता जाता है, वह पैसे से तिजोरियां भरता जाता है, सोने चांदी की शिलाएं तक एकत्रित करता जाता है पर अंत समय में साथ कुछ नहीं ले जाता। मानव संसार में जन्म लेता है तो उसके हाथों की मुट्ठियां बंद होती हैं जब यहां से विदा होता है वह खाली हाथ पसारे जाता है मानों सब को दिखा रहा होता है कि देखो, मैं खाली हाथ प्रस्थान कर रहा हूं। 'कहते भी हैं कि खाली हाथ आये, खाली हाथ जाना है, जितना खजाना यहां इक्ट्ठा किया, सब यहीं रह जाना है।' सृष्टि नियंता चौकीदार की तरह हमेशा चौंकन्ना रहता है, किसी को साथ ले जाने के लिए एक तिनका तक उठाने नहीं देता।

मनुष्य के अंत समय में कुछ भी साथ नहीं जाता, यह उतना ही कटु सत्य है जितना मृत्यु का आना, फिर मनुष्य अपनी समझदारी का इस्तेमाल क्यों नहीं करता जबकि ईश्वर ने उसे बुद्धि और विवेक का वरदान दे रखा है। मनुष्य की सांसारिक सुख सुविधाओं की भूख और आसक्ति कभी कम नहीं होती है। इस मामले में न तो उसकी बुद्धि काम करती है और न ही उसका विवेक जबकि वह जानता है कि मौत अवश्यंभावी है। संत कबीर ने कहा था : 'जो आया है वह जायेगा, राजा रंक फकीर, एक सिंहासन चढ़ चले, एक बंधे जंजीर।'

गालिब साहब भी फरमा गये हैं : 'मौत का एक दिन मुअय्यन है, नींद क्यों रात भर नहीं आती।' जीवन की कठोर सच्चाई यह है कि वह अंततः मौत के हवाले हो जाता है फिर भी मौत से डर के मारे उसे नींद नहीं आती।

परंतु धन–दौलत की हवस इतनी कि वह उसे इकट्ठा करने के लिए सच्चे झूठे तरीके अपनाता है। मनुष्य ने जन्म लिया है तो उसे जिंदा रहने के लिए कुछ वस्तुएं तो चाहिए ही, सच्चे और ईमानदार तरीके से वह उन्हें अर्जित कर सकता है परंतु जब वह धन – दौलत इक्ट्ठा करने के लिए भ्रष्टाचार करता है तो वह बुरे और पाप कर्म भी संचित करता जाता है। उसे उन बुरे कर्मों का फल देर सवेर भुगतना पड़ता है क्योंकि कहा गया है कि 'जैसे कर्म करोगे, वैसा फल देगा भगवान।'

भारत में मूल सनातन सिद्धांत रहा है कि हमारे द्वारा किये अच्छे बुरे कर्म अपना अच्छा या बुरा प्रभाव जरूर छोड़ते हैं। ये कर्म हमारे भाग्य का निर्धारण न सिर्फ इस जन्म में बल्कि हमारे शरीर छोड़ने के बाद आगे मिलने वाले जन्मों में भी करते हैं। इनके असर से बचा नहीं जा सकता। कर्म किसी भाग्य या हाथ की लकीरों का नाम नहीं है हमारे ही पूर्व जन्मों का सहज परिणाम है जो हमें आगे पीछे मिलता रहता है। कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य को सदा सद्कर्म करने चाहिए। सद्कर्म वह हैं जिनके करने से आंतरिक खुशी मिलती है और बुरे कर्मों से ग्लानि का भाव जाग्रत होता है। मनुष्य चाहे कर्म करके भूल जाता है परंतु कर्म उसे नहीं भूलता। कर्म मनुष्य का बराबर पीछा करता रहता है। कभी कभी मनुष्य सोचता है कि उसे कोई देख नहीं रहा, वह स्वयं को अनदेखा समझ बुरे कर्म कर डालता है पर उसे यह नहीं भूलना चाहिए कि जब मनुष्य कोई कर्म चुपके से इसलिए कर देता है कि उसे कोई देख नहीं रहा, परंतु उसके अच्छे या बुरे कर्म पर कर्म भी चौकीदार की तरह निगाह रखता है। इसीलिए कहा गया है :

'कर्म गति टारै नाहिं टरै,
मुनि वशिष्ठ – से पंडित ग्यानी,
सिधि (सोच) के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दसरथ को,
बन में बिपति परी।।'

मुनि वसिष्ठ तो महाज्ञानी थे और उन्होंने सोच समझ कर रामचंद्र जी के राजतिलक का शुभ मुहूर्त निकाला था पर हुआ क्या, राम को बनवास हुआ, पिता दशरथ राम के गम में परलोक गमन कर गये, बन में सीताजी का हरण हो गया और इस तरह विपत्ति पर विपत्ति आती गई।

भगवान कृष्ण की श्रीमद्भागवत गीता कर्म सिद्धान्त पर ही आधारित है। गीता के अनुसार जो कर्म निष्काम भाव से ईश्वर के लिए किये जाते हैं वे बंधन नहीं उत्पन्न करते। वे मोक्षरूप परमपद की प्राप्ति में सहायक होते हैं। इस प्रकार कर्मफल तथा आसक्ति से रहित होकर ईश्वर के लिए कर्म करना वास्तविक रूप से कर्मयोग है और इसका अनुसरण करने से मनुष्य को अभ्युदय तथा निःश्रेयस की प्राप्ति होती है।

साधारण तौर पर हम कह सकते हैं कि कर्म किए बगैर व्यक्ति किसी भी क्षण नहीं रह सकता है। कर्म हमारे अधीन हैं, उसका फल नहीं। महापुरुष और ज्ञानी जन हमेशा से कहते रहे हैं कि अच्छे कर्मों को करने और बुरे कर्मों का परित्याग करने में ही हमारी भलाई है। किसी संत से एक व्यक्ति ने पूछा कि आपके जीवन में इतनी शांति, प्रसन्नता और उल्लास कैसे है? इस पर संत ने मुस्कराते हुए कहा था कि अपने कर्मों के प्रति यदि आप आज से ही सजग और सतर्क हो जाते हैं, तो यह सब आप भी पा सकते हैं। सारा खेल कर्मों का है। हम कर्म अच्छा करते नहीं और फल बहुत अच्छा चाहते हैं। यह भला कैसे संभव होगा?

हम सब उस परम पिता परमात्मा चौकीदार की हमेशा नजर में रहते हैं। चौकीदार हम सब का हितैषी होता है और हमें संरक्षण प्रदान करता है और वह अपराधियों पर भी नजर रखता है और जब हमारे मन में आने वाले बुरे कर्म करने का विचार आता है तो चौकीदार हमें अपराध रुपी दुश्मन के प्रति सतर्क भी करता जाता है। अगर हम नहीं संभलते तो वह बुरे कर्म हमारे खाते में जमा होते जाते हैं, हो सकता है उन अपराधों के लिए हमारे विरुद्ध तत्काल एफ. आई.आर.न लिखी जाये, पर वह देर सवेर, इस जन्म में या फिर अगले जन्म में अवश्य लिखी जायेगी। कई बार तो पापों का घड़ा जब भर जाता है तब आपके कर्मों का हिसाब होना शुरू होता है। ऐसा नहीं है कि इन्सान इस बात से अवगत नहीं होता परंतु मनुष्य को मोह माया ऐसे वरगलाती है कि वह विभ्रम की स्थिति में चला जाता है और उससे बच नहीं पाता और उसमें फंसता चला जाता है। संत कबीर यह भी फरमा गये हैं :

'माया महाठगिनी हम जानी।' मनुष्य को माया ऐसे भरमाती है कि वह अवश और विवश हो उसकी तरफ चुम्बक – सा आकर्षित होता जाता है।

हम सब उस चौकीदार की नजर में रहते हैं तो उस चौकीदार ने हमें भी चौकीदार की भूमिका सौंप रखी है। हमारी यह भूमिका दोहरी होती है एक तो हम अपनी चेतना और ज्ञान की मदद से अपनी स्वयं की चौकीदारी करें और बुरे कर्मों से बचें। दूसरा, हम बाकी सबकी भी चौकीदारी करें। दुनियावी अर्थ में इसे ऐसे समझ सकते हैं कि हम ऐसा कोई बुरा कर्म न करें जिसका हमें बुरा फल भोगना पड़े। दूसरा, हम सभी पर भी अपनी नजर बना कर रखें ताकि दूसरा व्यक्ति ऐसा कर्म न करें जिससे किसी व्यक्ति,समाज या देश का अहित हो। इसको एक उदाहरण से समझ सकते हैं। हमारे प्रधानमंत्री मोदीजी कहते हैं कि वह देश के चौकीदार हैं और किसी को भ्रष्टाचार या अन्य कुकृत्य नहीं करने देंगे जिससे देश की जनता और देश का नुकसान हो। अगर कोई भ्रष्टाचार अथवा किसी अन्य कुकृत्य का दोषी पाया जाएगा तो उसे बख्शा नहीं जाएगा। वर्ष 2019 में जब वे चुनाव में प्रचार कर रहे थे तब उन्होंने स्वयं को चौकीदार कहा था और देशवासी उनके इस कथन से इतने प्रभावित हुए कि अनेक देशवासी स्वयं को चौकीदार कहने लगे। 'मैं भी चौकीदार' कहने वालों में से अनेक तो उस सक्रिय भूमिका में आ गये। इस प्रकार के प्रेरक कथनों और कृत्यों का अवश्य सार्थक प्रभाव पड़ता है। हम अभी भी देखते हैं कि देश में अभी भी भ्रष्ट और अपराधी तत्व फल फूल रहे हैं और देश की प्रगति में बाधक बन रहे हैं। 'मैं भी चौकीदार' वाली मुहिम को और अभी आगे बढ़ाने की जरूरत बनी हुई है। अगर हर व्यक्ति अपना खुद के और समाज और देश को आगे बढ़ाने के लिए चौकीदार की

भूमिका में आ जाये तो यह परमार्थ और देश सेवा का काम होगा। लेकिन चौकीदार को हमेशा चौकीदार की भूमिका में रहना होगा क्योंकि चौकीदार चौकीदार होता है मालिक नहीं होता। भारतीय संस्कृति तो इस मायने में उदात्त है कि जब यहां राजे महाराजा होते थे तो वे प्रायः जनता के सेवक या उसके न्यासी के रूप में कार्य करते थे क्योंकि वह जानते थे कि वह महाराज अवश्य हैं राज्य के मालिक नहीं। समय बदला और राजशाही का स्थान अब लोकतंत्र ने ले लिया है। कहा तो यहीं जाता है कि राज्य की शक्ति जनता में निहित है और जिन्हें जनता चुन कर भेजती है वह जनता के सेवक होते हैं उसके मालिक नहीं। परंतु देखा यह गया है कि मोह लालच उनको ऐसा विभ्रमित करता हैं कि चुने हुए अधिकांश प्रतिनिधि स्वयं को मालिक मान बैठते हैं और जो संसाधन जनता के लिए होते हैं, उन पर हाथ साफ करने से गुरेज नहीं करते हैं और देखते–देखते ही वह धन–दौलत का अपना साम्राज्य खड़ा कर लेते हैं। ऐसे तत्वों से निपटने के लिए जनता को देश के लिए चौकीदार की भूमिका में आ जाना चाहिए।

मनुष्य के जीवन की क्षणभंगुरता को रेखांकित करने के लिये 1974 में चौकीदार फिल्म बनी थी जिसका एक गीत जीवन के दर्शन को सिखाता है। फिल्मी गीतों में से कुछ ही ऐसे गीत हैं जिन्होंने वास्तविक परतों को खोलते हुए जिंदगी और मौत की सच्चाईयों से रूबरू करवाया है। फिल्म चौकीदार का यह गीत उन्हीं चुनिंदा गीतों में से एक है। इसके बोल कुछ इस प्रकार है :

'जीते जी दुनिया को जलाया मर के आप जला
पूछो जाने वाले से कोई तेरे साथ चला
ये दुनिया नहीं जागीर किसी की
राजा हो या रंक यहाँ तो सब हैं चौकीदार
कुछ तो आ कर चले गये कुछ जाने को तैयार।'

आपाधापी और व्यस्तताओं में खोए हुए किसी व्यक्ति को झकझोंर देने वाले ये बोल लिखे हैं गीतकार राजिन्दर कृष्ण ने, जिनके लिखे शब्द कालजयी हैं इसलिए आज भी प्रासंगिक हैं। बुद्ध को मृत व्यक्ति को देखकर ज्ञान प्राप्त हुआ था, चूंकि मृत्यु से ज्यादा जीवन की निकटतम सच्चाई और कोई नहीं है। राजिन्दर कृष्ण अपने लफ्जों से यही कहना चाहते हैं जिसे उसी साफगोई से रफी साहब ने अपनी आवाज भी दी है कि आप गीत के बोलों को महसूस कर सकें।

फिल्म चौकीदार में गीत की शुरुआत भी एक चिता के साथ ही होती है और भाव है कि व्यक्ति के मरने के बाद उसके साथ कोई नहीं जाता। दुनिया की सारी संपत्ति यहीं रह जाएगी और लोग चले जाएंगे। इसलिए फिजूल ही तेरा–मेरा की बातों में नहीं उलझना चाहिए। जब अगली सुबह की जिंदगी का ही भरोसा नहीं है तो भविष्य को लेकर इतनी उहापोह भी क्यूं।

जैसे एक चौकीदार किसी जगह पर होता तो है, उसकी रखवाली भी करता है लेकिन वह वहां का मालिक नहीं होता। उसी तरह लोग भी दुनिया में तो आते हैं लेकिन वह यहां के मालिक नहीं हैं। इन अर्थों में राजा और रंक दोनों ही चौकीदार हैं। इसी प्रकार संत कबीर ने यह भी लिखा है :

'मन फूला फूला फिरे जगत में यह कैसा नाता रे' किंतु भरोसा क्षण भर का नहीं, कब किस समय बुलावा आ जाये, कोई नहीं जानता। लेकिन मनुष्य है कि उसे 'अगले पल भर की खबर नहीं, सामान सौ बरस का'। इन सब बातों का सार यहीं है कि मनुष्य को सर्वदा सद्कर्म ही करने चाहिए क्योंकि मनुष्य जन्म अत्यंत दुर्लभ मिलता है और मानव जीवन ईश्वर की सबसे उत्कृष्ट और अनुपम रचना है। ईश्वर से जीवन के रूप में उपलब्ध हुए इस अद्भुत वरदान का हम पूरा सम्मान करें, मनुष्य का शरीर अमूल्य है जिसमें परमात्मा का अंश विद्यमान रहता है अर्थात् यह शरीर एक मंदिर है जिसमें ईश्वर स्वयं निवास करता है। शरीर को हमेशा साफ, स्वच्छ और स्वस्थ रखने के साथ साथ अपने मन को पवित्र और पावन रखना होगा, यह तभी संभव है जब हम बुरे कर्मों को कभी पास न फटकने दें इसके लिए हमें अपनी चेतना रुपी चौकीदार को सजग और सतर्क रखना होगा। ■

तत्त्वज्ञानालोकित योगी इंद्रिय, मन और बुद्धि के साधारण जगत् में रहता है, किंतु उसकी आत्मा पूर्ण शांति और आनंद के अतिमानसिक, अतिबौद्धिक स्तर पर विराजती है। सतत अनुशासन के परिणामस्वरूप उसकी देह, इंद्रियाँ, विचार- शक्ति तथा विवेक-शक्ति तीव्र और सात्त्विक हो जाती है। इतना ही नहीं, योग-साधनाओं के फलस्वरूप उसे अद्भुत दिव्य-सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, जो सापेक्षिक जगत् के स्तर पर साधारण लोगों के लिए चमत्कार या दिव्य प्रतीत होती है। वह नेत्र बिना देख सकता है, कान बिना सुन सकता है, वह त्रिकालज्ञ, परकाया-प्रवेश करने वाला तथा सर्वज्ञाता बन सकता है। वह आकाश में पक्षियों की भाँति विचरण कर सकता है, दीवारों में मार्ग बना सकता है और प्रकृति की शक्तियों से मनचाही इच्छा पूर्ण करा सकता है। कोई भी समर्पित योग्य साधक आत्मअनुशान तथा संयम के मार्ग का अनुसरण योग्य गुरू के निर्देशन में कर दिव्य सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है। अति शीघ्रता की इच्छा रखने वालों के लिए यह मार्ग कदापि नहीं है।

– योगी शिवनंदन नाथ

14 मई पर विशेष

अंतर्राष्ट्रीय मातृ दिवस

माँ का रिश्ता सबसे अनमोल

आकांक्षा यादव
पोस्टमास्टर जनरल आवास नदेसर,
कैण्ट प्रधान डाकघर, वाराणसी

माँ दुनिया का सबसे अनमोल रिश्ता है। एक ऐसा रिश्ता जिसमें सिर्फ अपनापन और प्यार होता है। माँ हमारे जीवन में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है और माँ की वजह से हम आज इस दुनिया में हैं।माँ शब्द जुबान पर आते ही मन श्रद्धा से भर जाता है। दिल की गहराईयो में प्यार का सागर उमड़ने लगता है। माँ की हर सीख हमें याद आती है, जो उन्होंने हमें बचपन में सिखाई है। हर व्यक्ति को अपनी माँ बहुत अच्छी लगती है। सभी कहते हैं कि मेरी माँ के जैसा कोई नहीं है। क्योंकि हर बच्चे के शरीर में माँ का रक्त प्रवाहित होता रहता है। माँ अपनी आयु के सुखद क्षणों को अपनी संतानों पर न्यौछावर कर देती है। उनका निस्वार्थ स्नेह और समर्पण हमें हमेशा याद रहता है। माँ जन्मदात्री के साथ–साथ ज्ञान और शक्तिदायिनी भी है।

दुनिया में माँ का एक ऐसा अनूठा रिश्ता है, जो सदैव दिल के करीब होता है। हर छोटी–बड़ी बात हम माँ से शेयर करते हैं। जब भी कभी उलझन में होतेहैं तो माँ से बात करके जो आश्वस्ति मिलती है, वह कहीं नहीं। दुनिया के किसी भी कोने में रहें, माँ की लोरी, प्यार भरी डांट और चपत, माँ का प्यार, दुलार, स्नेह, अपनत्व व ममत्व, माँ के हाथ का बना हुआ खाना, किसी से झगड़ा करके माँ के आँचल में छुप कर अपने को महफूज समझना, बीमार होने पर रात भर माँ का जगकर गोदी में सर लिए बैठे रहना, हमारी हर छोटी से छोटी जिद को पूरी करना, हमारी सफलता के लिए देवी–देवताओं से मन्नतें माँगना .....और भी न जाने क्या–क्या कष्ट माँ हमारे लिए सहती है। जब आपको चोट लगती है तो सबसे पहले जिसकी याद आती है वह कौन है? और किसे सुनाई थी आपके अपनी तोतली जुबान में पहली कविता? और कोई नही, वह माँ ही तो है। जरा सोचिए, अगर माँ सुबह जल्दी आपको

न उठाए तो आप स्कूल कैसे पहुँच पाएंगे। माँ ही तो है जो आपकी हर छोटी से छोटी जरूरत के लिए भी कई-कई बार टोकती है। एक दिन हम सफलता के पायदान पर चढ़ते हुए अपनी अलग ही जिदगी बसा लेते हैं। हम माँ की नजरों से दूर अपनी दुनिया में भले ही अलमस्त रहते है, फिर भी माँ रोज हमारी चिंता करती है। हम सोचते हैं कि हम बड़े हो चुके हैं, पर माँ की निगाह में तो हम बच्चे ही हैं। माँ की इबादत हर दिन भी करें तो भी उसका कर्ज नहीं चुका सकते। कहते हैं ईश्वर ने अपनी कमी पूरी करने के लिए इस धरा पर माँ को भेजा इस धरा परमाँ ईश्वर का जीवंत रूप है। माँ को खुशियाँ और सम्मान देने के लिए पूरी जिंदगी भी कम होती है।

भारतीय परंपरा में मातृ शक्ति का विशिष्ट स्थान है। यहाँ मातृ पूजा की सनातन परंपरा रही है और हर जीवनदायिनी को माँ का दर्जा दिया गया है, फिर चाहे वह धरती हो या प्रकृति। यहाँ जननी को स्वर्ग से भी बढ़कर माना गया है। माता भूमिः पुत्रोहं पृथिव्याः (भूमि मेरी माँ है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ) कहकर पालन-पोषण करने वाली धरती को एवं मोक्षदात्री पतित पावनी गंगा को भी माँ कहकर सम्मानित किया जाता है। माँ वह ममतामय शब्द है, जिसकी झंकृति से ही नारी हृदय का रोम-रोम करूणा, ममता एसं वात्सल्य से पुलकित हो जाता है और मंदिर की भाँति पावन स्वर भरने वाली घंटियाँ बजने लगती हैं। 'मातृदेवो भव' कहकर रोम-रोम में पृथ्वी पर ईश्वररूपी माँ के प्रति दैवीय भाव की भावना व्यक्त की गई है। नवरात्र जैसे पवित्र त्यौहार तो मातृ शक्ति को ही समर्पित होते हैं। भारतीय परम्परा में मातृ शक्ति के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए मातृ नवमी (श्राद्ध पक्ष में) की तिथि सुनिश्चित की गयी है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी देखें तो मातृ पूजा का इतिहास सदियों पुराना एवं प्राचीन है। माँ भगवान का बनाया एक ऐसा तोहफा है जिसकी जितनी प्रशंसा की जाए वह कम ही है। अतुलनीय, अद्भुत, अकल्पनीय कुछ इससे भी बढ़कर है माँ! मातृ पूजा का रिवाज पुराने ग्रीस से उत्पन्न हुआ है, जो ग्रीक देवताओं की मां स्ब्बेले के सम्मान में मनाया जाता था। यह त्यौहार एशिया माइनर के आस-पास और साथ ही साथ रोम में भी वसंत विषुव के आस-पास मनाया जाता था। प्राचीन रोमवासी एक अन्य छुट्टी मनाते थे, जिसका नाम है मेट्रोनालिया, जो जूनो को समर्पित था, यद्यपि इस दिन माताओं को उपहार दिये जाते थे। यूरोप और ब्रिटेन में कई प्रचलित परम्पराएं हैं जहाँ एक विशिष्ट रविवार को मातृत्व और माताओं को सम्मानित किया जाता था, जिसे मदरिंग सण्डे कहा जाता था। यूनान में वसंत ऋतु के आगमन पर परमेश्वर की मां को सम्मानित करने के लिए यह दिवस मनाया जाता था। 16वीं सदी में इंग्लैण्ड का ईसाई समुदाय ईशु की माँ मदर मेरी को सम्मानित करने के लिए यह त्यौहार मनाने लगा। वस्तुतः 'मातृ दिवस' मनाने का मूल कारण मातृ शक्ति को सम्मान देना और एक शिशु के उत्थान में उसकी महान भूमिका को सलाम करना है।

भारतीय संस्कृति माँ को सम्मान देने वाली संस्कृति है। लेकिन जिस "मदर्स डे" को मई माह के दूसरे रविवार को सेलिब्रेट करते हैं, उसकी शुरूआत अमेरिका में वर्ष 1908 में हुई। वेस्ट वर्जिनिया के ग्राफ्टन शहर की रहने वाली अन्ना जारविस ने सबसे पहले अपनी माँ की याद में मदर्स डे मनाने का फैसला किया। अन्ना जारविस सिर्फ अपनी माँ के लिए ही नहीं, बल्कि दुनिया भर की माँओं को उनकी ममता का सम्मान देना चाहती थीं, जिसके लिए उन्होंने लगातार संघर्ष किया। अंततः 1912 में मई के दूसरे रविवार को "वर्ल्ड मदर्स डे" के तौर पर मनाया गया। मदर्स डे को आधिकारिक बनाने का निर्णय अमरीकी राष्ट्रपति वुडरो विलसन ने 8 मई, 1914 को लिया। 8 मई, 1914 को अन्ना की कठिन मेहनत के बाद तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने मई माह के दूसरे रविवार को मदर्स डे मनाने और माँ के सम्मान में एक दिन के अवकाश की सार्वजनिक घोषणा की। वे समझ रहे थे कि सम्मान, श्रद्धा के साथ माताओं का सशक्तीकरण होना चाहिए, जिससे मातृत्व शक्ति के प्रभाव से युद्धों की विभीषिका रुके। तब से हर वर्ष मई के दूसरे रविवार को 'मदर्स डे' मनाया जाता है। अमेरिका में मातृ दिवस (मदर्स डे) पर राष्ट्रीय अवकाश होता है। अलग-अलग देशों में मदर्स डे अलग-अलग तारीख पर मनाया जाता है। 1920 तक आते-आते हॉलमार्क आदि कंपनियों ने इस खास दिवस के लिए कार्ड और गिफ्ट आदि बाजार में उतार दिए और आज दुनिया भर में मदर्स डे बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। विश्व में कुछ जगहों पर लोग अपनी माँ के लिए लाल गुलाब खरीदते हैं तो वहीं जिनकी माँ अब इस दुनिया में नहीं हैं, वह उनकी याद में सफेद गुलाब खरीदते हैं।

अब भारत में भी पाश्चात्य देशों की तरह 'मदर्स डे' को एक खास दिवस पर मनाने का महत्व बढ़ रहा है। इस दिन माँ के प्रति सम्मान-प्यार व्यक्त करने के लिए कार्ड्स, फूल व अन्य उपहार भेंट किये जाते हैं। माँ और ममता को सम्मान देने का दिन है 'मदर्स डे'। ग्रामीण इलाकों में अभी भी इस दिवस के प्रति अनभिज्ञता है पर नगरों में यह एक फेस्टिवल का रूप ले चुका है। काफी हद तक इसका व्यवसायीकरण भी हो चुका है। लेकिन माँ को खुश करने के लिए महंगे तोहफों या सरप्राइज मैसेज की जरूरत नहीं होती, बल्कि वह तो खुश हो जाती है, आपकी छोटी सी ईमानदारी से भी।

किसी एक खास दिन मदर्स डे मनाना आसान लगता है पर माँ को याद करने से पहले जरा इन आंकड़ों पर भी गौर फरमाएं। हो सकता है कि इन्हें पढ़ते-पढ़ते आपकी आँखें नम हो जाएँ। नम आँखों में इन आँकड़ों की कमी-बेशी के बीच भी प्यार और त्याग से सराबोर माँ का जीवन छुपा हुआ। अब जरा ठहरकर सोचें इस प्यार और त्याग के बदले में हम उसे क्या देते हैं? माँ आज भी गृहस्थी और कैरियर के बीच झूल रही हैं। बच्चों की परवरिश के बीच कैरियर की तमन्ना कब दम तोड़ जाती है, पता ही नहीं चलता। आंकड़े बताते हैं कि 77 फीसदी माँओं ने पहली संतान के बाद अपने सपने छोड़ दिये, वहीं 91 फीसदी माताएं बच्चों से ये सपने पूरा करने की उम्मीदें रखती हैं। पेशेवर जिंदगी की कठिनाइयाँ को लेकर प्यू रिसर्च सेंटर द्वारा 2012 में किये गये एकसर्वे पर गौर करें तो स्थति स्वतःस्पष्ट हो जाती है। आज भी 32 फीसदी माँएं ही फुल टाइम नौकरी की ख्वाहिशमंद हैं। 71 फीसदी माताओं के लिए तो नौकरी करना आर्थिक मजबूरी है। 67

फीसदी माँएं घर रहकर ही काम करने की सुविधा चाहती हैं, वहीं 47 फीसदी माँएं पार्ट टाइम नौकरी करने में ज्यादा सहज करती हैं। 46 फीसदी माताएँ बच्चों के लिए कैरियर कुर्बान कर देती हैं तो 29 फीसदी ने बच्चों की परवरिश के लिए नौकरी छोड़ दी। 60 फीसदी माँएं खुद से ज्यादा बच्चों के बीमार होने पर छुट्टियाँ लेती है। इसी प्रकार जीवन की आपाधापी में सेहत के मोर्चे पर देखे तो माताएं रोजना रात को औसतन 2 घंटे नींद गँवाती हैं। 88 फीसदी माँएं तनाव महसूस करती है। 44 फीसदी महिलाएं खानपान पर ध्यान नहीं दे पातीं वहीं 40 फीसदी हड़बड़ी में रहती हुई रंग–रूप पर ध्यान नहीं दे पातीं। 43 फीसदी माँएं डिप्रेशन तो 19 फीसदी माइग्रेन से पीड़ित हैं। घर–समाज में माताओं द्वारा इतना सब कुछ त्याग करने के बावजूद कई बार स्थितियां उनके लिये बेहद जिल्लत भरी होती हैं। हेल्पेज इंडिया–2011 सर्वे के अनुसार घर में भी 70 फीसदी माँएं बहू–बेटे का अत्याचार झेलती हैं तो 64 फीसदी बहुएँ सास को प्रताड़ित करती हैं। 70 फीसदी बच्चे माँ–बाप से झगड़े करते हैं तो 87 फीसदी बुजुर्ग माँओं को उपेक्षा की शिकायत है। 23 फीसदी बूढ़ी माँएं काम करने को मजबूर हैं। 15,000 से ज्यादा बुजुर्ग महिलाएँ वृदावन में भीख मँगाकर गुजर–बसर करती हैं। इनमें से ज्यादातर बच्चों द्वारा छोड़ी गई माँएं हैं। यह स्थिति देख कर कोई भी असहज महसूस करेगा।

ऐसे में रिश्तों पर हावी होती स्वार्थपरता और व्यवसायकिता के बीच यह भी सोचने की जरूरत है कि रिश्ते कहीं किसी दिन विशेष के मोहताज न हो जायें। माँ तो जननी है, वह अपने बच्चों के लिए हर कुछ बर्दाश्त कर लेती है। पर दुःख तब होता है जब माँ की सहनशीलता और स्नेह को उसकी कमजोरी मानकर उसके साथ दोयम व्यवहार किया जाता है। माँ के लिए बहुत कुछ लिखा–पढ़ा जाता है, यह कला और साहित्य का एक प्रमुख विषय भी है, माँ के लिए तमाम संवेदनाएं प्रकट की जाती हैं पर माँ अभी भी अकेली है। जिन बेटों–बेटियों को उसने दुनिया में सर उठाने लायक बनाया, शायद उनके पास ही माँ के लिए समय नहीं है। अधिकतर घरों में माँ की महत्ता को गौण बना दिया गया है। आज भी माँ को अपनी संतानों से किसी धन या ऐश्वर्य की लिप्सा नहीं, वह तो बस यही चाहती है कि उसकी संतान जहाँ रहे खुश रहे। पर माँ के प्रति अपने दायित्वों के निर्वाह में यह पीढ़ी बहुत पीछे है। माँ के त्याग, तपस्या, प्यार का न तो कोई जवाब होता है और न ही एक दिन में इसका कोई कर्ज उतारा जा सकता है। मत भूलिए कि आज हम–आप जैसा अपनी माँ से व्यवहार करते हैं, वही संस्कार अगली पीढ़ियों में भी जा रहे हैं।

माँ शब्द की कोई परिभाषा नहीं है, यह शब्द अपने आप में पूर्ण है।

माँ

श्रीमती शोभा रानी तिवारी
इंदौर, मध्य प्रदेश

माँ तुम धरती हो और आकाश हो,
तुम ही मेरे जीवन की मधुमास हो,
जिन्दा हूं क्योंकि, दिल धड़कता है,
मेरे हर धड़कन की,तुम ही श्वास हो।

गीली मिट्टी से जो चाहे गढ़ लेती हो,
हरदम मन के भावों को पढ़ लेती हो,
सूत्रधार बन रिश्तो में मिठास भरती,
पतझड़ खुद सहकर , बहार देती हो,
युगों–युगों से ही सृष्टि का इतिहास हो,
माँ तुम ही मेरे जीवन की मधुमास हो।

मर्यादा की चादर ओढ़े फर्ज निभाती,
चुनौती को लक्ष्य बना बढ़ती जाती हो,
पन्नाधाय बनकर, राजधर्म निभाती हो,
परीक्षा देने विष का प्याला पी जाती हो,
तुम ही तो मेरे सुख–दुःख का एहसास हो,
माँ तुम ही मेरे जीवन की मधुमास हो।

कुदरत का तोहफा प्रगति का दर्पण हो,
त्याग की ऊंचाई और स्नेह का बंधन हो,
सहनशीलता का गुण, धरती से पाई हो,
तुम ही शक्ति भक्ति हो, तुम ही चंदन हो,
मेरे हर कदमों का तुम ही तो विश्वास हो,
माँ तुम ही मेरे जीवन की मधुमास हो।

स्थायी स्तम्भ

वेदामृत मंथन

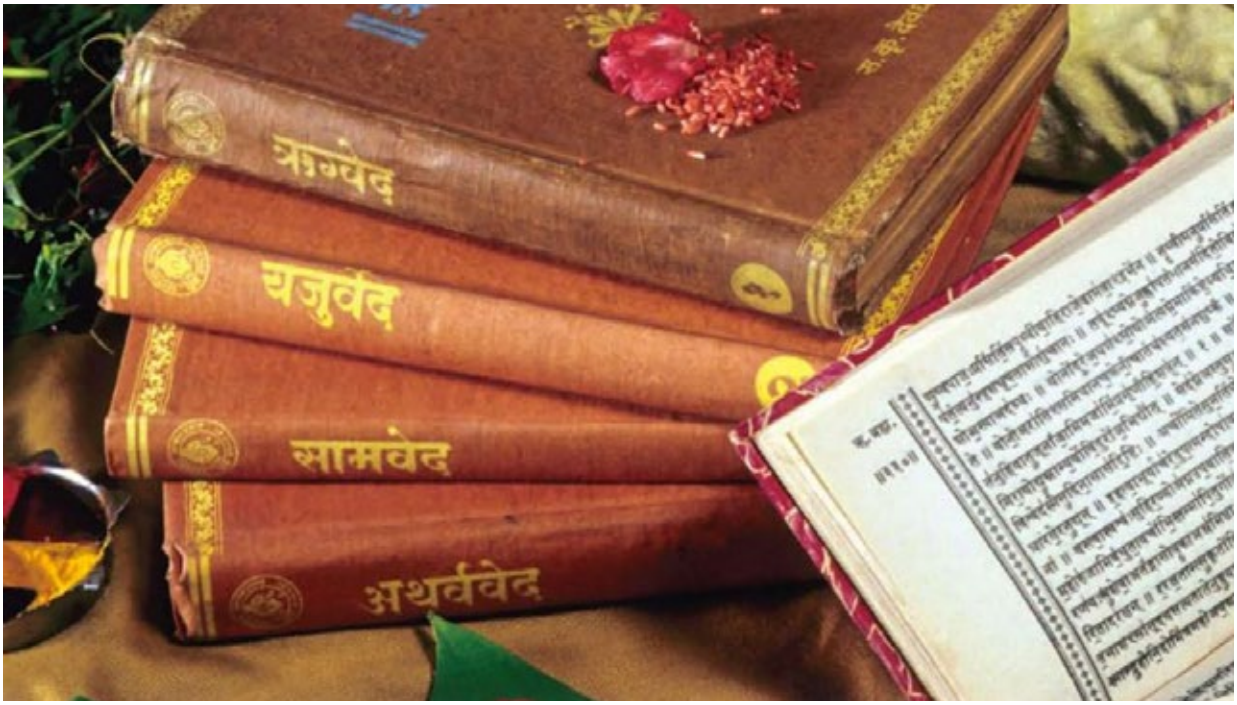

डॉ. अलका शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सह संपादक योग संस्कृति
उत्थान पीठ पत्रिका

'वेद' विश्व का प्राचीनतम वाड्मय होने के साथ साथ अपौरुषेय, सर्वज्ञ, सर्वजन हिताय सार्वभौमिक ग्रंथ माने जाते है। जिन उदात्त सिद्धान्तों के कारण भारतीय संस्कृति ने विश्व को अपनी ओर आकृष्ट किया उसका मूल स्रोत 'वेद' ही है इसी लिये वेद को देव, पितर व सनातन चक्षु कहा भी कहा गया है। मनु महाराज ने वेद को भूत, भविष्य एवं वर्तमान के लिए परम लाभकारी मानते हुए –

***भूतं भव्यम भविष्य च सर्व वेदात प्रसिध्यति** कह डाला है।*

मानव के ऐहिक ,परलोकिक कल्याण के साधनभूत धर्म का विस्तृत विश्लेषण वेदों में ही उपलब्ध है। धर्म के अलावा जीवन का कोई क्षेत्र अछूता नही जिसका वर्णन वेदों में न मिलता हो। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत किये जाने 16 संस्कार तक, दिनचर्या, इशोपसना, कर्मकांड, यज्ञादि का पूर्ण वर्णन, मुमुक्षत्व की कैसे प्राप्ति हो इन सभी का विस्तार से वर्णन वेदों में मिलता है

***मन को कैसे नियंत्रित किया जाए :** आज का लेख मुख्यतः इसी पर आधारित है। हमारा मन इतना चंचल,वेगवान बलवान होता है इसी के कारण व्यक्ति प्रतिपल विषय वासनाओ व भौतिक सुखों में लिप्त रहकर हर समय दुख या सुख भोगता है। जीवन मे अपना उत्थान चाहने वाले हर व्यक्तिके लिए सभी इंद्रियों के प्रेरक प्रबल, हठी मन को नियंत्रित परम आवश्यक है। यदि मन बुद्धि का उल्लंघन कर प्रतिपल विषयो को ओर दौड़ेगा तो व्यक्ति का पतन निश्चित है।*

अतः यदि चित्त की एकाग्रता व निर्मलता, जीवन मे सुख, मन की शांति, प्राप्त कर अपने लक्ष्यकी प्राप्ति करनी है तो मन पर अंकुश लगाना परम आवश्यक है क्योंकि आज मनोरंजन के नाम पर परोसी गई फिल्में, वेब सीरीज, विज्ञापन आदि के कारण युवा वर्ग दिग्भ्रम की स्थिति तक पहुँच गया है। ऐसे में अपनी पढ़ाई या लक्ष्य की प्राप्ति कठिन हो जाता है इसी लिए सभी के लिए विशेष रूप से युवा वर्ग के लिए यह लेख बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। वर्तमान परिपेक्ष्य में आज का लेख विशेष रूप से युवा वर्ग के लिए अति उपयोगी, व लक्ष्य – प्राप्ति में सहायक सिद्ध होगा ।

यजुर्वेद में मन पर नियंत्रण कैसे संभव है एक सुंदर दृष्टांत के माध्यम से बताया गया है–

सुषारथिरश्वनिव यन्मनुष्यनने नीयतैभिशुभि वार्जिन इव।
हत्प्रतिष्ठम यद जिरम जविष्टम तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु।

यजुर्वेद 34/6

(जिस प्रकार श्रेष्ठ सारथि घोड़ो का संचालन व रास (लगाम) द्वारा घोड़ो पर पूर्ण नियंत्रण रखता है। वैसे ही प्राणियों का संचालन व नियंत्रण करने वाला, अत्यंत वेगवान, हृदय में रहने वाला, कभी बूढा न होने वाला मेरा मन शुभ संकल्पों से युक्त हो।)

इस तथ्य से सभी विद्वान परिचित होंगे हमारा मन ही सबसे ज्यादा चंचल होता है। इसी के कारण मनुष्यों में भटकाव आता है। अतः नयन व नियमन सभी मन के आधीन है। यदि हमारा मन शुभ संकल्पों से युक्त होगा तो सत प्रवृतियों से इसका नियमन करेगा। लेकिन अगर हमारा मन पाप संकल्पों होगा तो वही मनुष्य के विनाश व दुर्गति का कारण बन जायेगा।

कहने का अभिप्राय यह है कि यदि हम जीवन मे सुख शांति सफलता श्री, उत्थान व चतुर्दिक उन्नति चाहते है तो मन को नियंत्रित करने के लिए सुसारथि बनना पड़ेगा। जिस प्रकार एक कुशल सारथि को पूर्ण जानकारी होती है की घोड़ो को कब कितनी ढील देनी, कब लगाम कसनी है। उसी प्रकार हम सांसारिक विषयो ओर आध्यात्म में तादात्म्य स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम मन को नियंत्रित करना होगा।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि जब जब भी इस प्रकार के विषय पर चर्चा की जाती है तो लोगो की पहली प्रतिक्रिया होती है कि हमे इन सबसे क्या लेना – देना। जिंदगी चार दिन की है अतः एन्जॉय करेंगे। पर मेरा यह मानना है कि वेदों का इस मंत्र को यदि हमारी युवा पीढ़ी अपने जीवन मे उतार ले, इसे जीवन मे अपनाए तो उनकी जीवन धारा बदल सकती है। क्योंकि यदि चित्त में एकाग्रता होगी उतना ही वे अध्ययन सम्यक रूप से करके सफलता के चरम शिखर पर पहुंच सकते है। क्योंकि वयःसंधि काल मे भटकाव की प्रबल संभावना होती है।

इस विषय मे एक लौकिक दृष्टांत देकर इस विषय को ओर स्पष्ट करना चाहूंगी। हमारी युवा पीढ़ी तेज कार चलाने की कितनी शौकीन है ये आप सभी जानती है। पर उनको भी ट्रैफिक ज्यादा होने पर दुर्घटना से बचने के लिए ब्रेक का इस्तेमाल होता है। ठीक इसी प्रकार से इंद्रियों को गलत विषयो से रोकने के लिए मन एक ब्रेक का काम कर सकता है बशर्ते आपको इस की जानकारी हो ।

बालको के चरित्र निर्माण की प्रक्रिया में मन पर नियंत्रण की महत्व पूर्ण भूमिका होती है। केवल इसी के द्वारा उत्तम चरित्र, चित्त की एकाग्रता, स्वाध्याय में रुचि, स्वस्थ शरीर, सफलता सभी आसानी से प्राप्त किये जा सकते है। यदि मन स्वस्थ होगा। तो शरीर स्वतः स्वस्थ हो जाएगा। क्योंकि आज पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण, घर घर मे कंप्यूटर, स्मार्ट फोन, गूगल बाबा के कारण युवा पीढ़ी को व्यसनों से बचने के लिए वर्तमान परिपेक्ष्य में मन पर नियंत्रण ही उन्हें कुमार्गगामी होने से बचा सकता हैख

चंचल मन पर नियंत्रण सभी के लिए लाभकारी है अब प्रश्न उठता है कि मन को वश में कैसे किया जाए। क्योंकि मन अत्यंत वेगवान होने के कारण मनुष्य आसानी से इस पर नियंत्रण नही कर पाते। कहा जाता है विद्युत व ध्वनि की गति से भी ज्यादा गतिमान हमारा मन है इसी कारण गीता में अर्जुन मन को वश में करना वायु को वश में करने के समान दुष्कर मानते है।

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।

(हे कृष्ण! यह मन बहुत ही चंचल, हठीला, अत्यंत बलवान है। इस मन को वश में करना वायु को वश में करने से भी कठिन है।)

जीवन मे सुख दुख ,राग द्वेष ईर्ष्या, दुःख का मुख्य कारक मन ही है। गीता में अर्जुन के प्रश्न करने पर भगवान श्री कृष्ण ने मन को वश में उपाय बताया–

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।

'है महाबाह! निसंदेह ये मन अत्यंत चंचल है और बड़ी कठिनता से वश में किया जाता है। लेकिन कुंतीपुत्र अभ्यास एवं वैराग्य से मन को नियंत्रित किया जा सकता है।'

अपनी इंद्रियों को अंतर्मुखी करके मन को केंद्रित करके ध्यान करना ही अभ्यास है ।

बाह्य जगत की नश्वर वस्तुओं के प्रति आकर्षण ,उनको प्राप्त करने के की तीव्र उत्कंठा, प्राप्ति के लिए लगातार संघर्षरत रहना , न मिलने पर अत्यधिक क्रोध या क्षोभ कर होना, इन सभी से अपनी चिवृतियो को नियंत्रित करना भी अभ्यास ही है ।

मन पर नियंत्रण का मूल मंत्र वर्तमान परिपेक्ष्य में सभी के लिए ईर्ष्या, द्वेष, कुंठा, तनाव को दूर कर आंतरिक शांति प्राप्ति करने में परम सहायक है ।

मेरा यह मानना है कि यदि देश के नौजवान अपने जीवन मे अपने लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते है नित उन्नति के शिखर की ओर अग्रसर होने चाहते है तो मन को भटकाव से बचाना होगा। सदाचार्युक्त ऊर्ध्वगामी चेष्टाएँ करनी होगी। मन पर नियंत्रण द्वारा अपने लक्ष्य की प्राप्ति के बाद संसार के समस्त सुखों का आस्वादन करने में स्वतः ही सक्षम होंगे।

गणपति वंदना

डॉ. निशा नंदिनी भारतीय
तिनसुकिया, असम

गौरीनंदन गजानना
पार्वतीनंदन गजानना।
हे शिवनंदन गजानना
सच्चिदानंदा गजानना।

श्री गणराया गजानना
जय गणराया गजानना।
चिन्मयरूपा गजानना
गिरिजा तनया गजानना।

सिद्धि विनायक गजानना
भवभयनाशक गजानना।
मूषकवाहन गजानना
सुरमुनि वंदित गजानना।

विद्यादायक गजानना
बुद्धि प्रदायक गजानना।
मंगलदायक गजानना
ऊँकारेश्वर गजानना।

गजवदना गजानना
गणनाथा गजानना।
लंबोदरा गजानना
मोदकप्रिय गजानना।

विघ्नविनाशक गजानना
अष्टविनायक गजानना।
वेदस्वरूपा गजानना
ब्रह्मस्वरूपा गजानना।

विश्वाधारा गजानना
भवानीनंदन गजानना।
शांतिप्रदायक गजानना
ज्ञानस्वरूपा गजानना।

भवतारक गजानना
संकटहरणा गजानना।
भक्तरक्षक गजानना
विद्यावारिधि गजानना।

.....गतांक से आगे

वैदिक विमान विज्ञान ऋषि भरद्वाज के विशेष संदर्भ में

डॉ. विदुषी शर्मा
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
अकादमिक काउंसलर, IGNOU
शोध निर्देशक, JJTU
विशेषज्ञ, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, उच्चतर शिक्षा विभाग, भारत सरकार
OSD , (Officer on Special Duty) NIOS
दिल्ली

विशेष : प्रस्तुत विषय एक ऐसा विषय है जिस पर बहुत अधिक गहन शोध की आवश्यकता है उसके लिए हमारे पास प्रामाणिक ग्रंथों की उपलब्धता भी आवश्यक है। वर्तमान में हमारे पास जितनी भी सामग्री उपलब्ध हो सकी है उसी पर आधारित यह है आलेख लिखने का प्रयास किया है। प्रस्तुत विषय बहुत ही गंभीर है इसीलिए यदि कोई त्रुटि हो तो उसके लिए मैं अग्रिम क्षमा याचना करती हूं क्योंकि यह विषय वेदों से संबंधित ही नहीं अपितु उन ऋषि मुनियों से संबंधित है जिनकी ज्ञान की सीमा, उनकी आध्यात्मिकता, परोपकार की भावना, तपस्या, आत्मिक बल इत्यादि की कल्पना भी हम नहीं कर सकते हैं। इसीलिए केवल सार्थक प्रयत्न किया है क्योंकि पूर्णता केवल ईश्वर में विद्यमान है।

वेदों मे बार– बार प्रयुक्त शब्दावली जैसे तेज,वरूण,मित्र,वरूण, प्राणवायु आदि जिन्हें आधुनिक विज्ञान के अनुसार निम्न रूपो में देख सकते हैं–

तेज : Electric charge
मित्र : Positive charge (+)
वरूण : Negative charge(-)
प्राणवायु : Oxygen Gas
उदान वायु : Hydrogen gas
शिखिग्रिवेण : copper sulphate
पारद : mercury
यानकम् : Flying machine
जल भंग : decomposition of water
शिल्पशास्त्रम् : technology
आद्र काष्ठपांसु : moisten woodaw dust
दस्तालोष्ठ : Zink powder mond

विमान विद्या के प्रमाण

श्लोक

अनेन जल भंग: अस्ति प्राणोदानेषु वायुषु। एवं शतांनां कुम्भानां संयोग कार्यकृत स्मृत:।।३।।
वयुबन्ध वस्त्रेण निबद्धो यान मस्तके। उदान स्वयदुत्वे विभर्त्याकाश यानकम्।।४।।

अर्थ : ये मित्र वरूण नामक दोनो तेज जल का विभाजन प्राणवायु तथा उदानवायु में कर देते हैं। इसके लिये इस प्रकार के सौ पात्रों का प्रयोग करना चाहिये। वायु बन्धक वस्त्र में उदानवायु को भरना चाहिये!

उदानवायु भरे वस्त्र को किसी यान के मस्तक से बाँध देने से, यह यान को आकाश मे ले जाता है।

उपर्युक्त तथ्यो सें स्पष्ट होता हैं कि विज्ञान सम्मत ज्ञान से भरपूर वेदों को पुनः समीक्षा करके स्थापित किया जा सका, तो भारत के प्रति विश्व की दृष्टि ही बदल सकती है।

भूगोल व पृथ्वी का ज्ञान : अरबों वर्ष पूर्व भी शिल्पी लोगो को पृथ्वी के चक्कर (परिधि) की दूरी व अन्य देशों की दूरी पता थी। यह सत्य है कि जितनी भी विद्या है वो सब भारत से निकलकर मिश्र फिर वहां से यूरोप गयी।

गणित विद्या के 'सूर्यसिद्धान्त' व 'आर्यभट्टीयम्' व अन्य ग्रन्थ मिलते हैं जिनमे ग्रहों के बीच की दूरी, चाल सब पता लगता है। वर्तमान गणित उन्ही पर आधारित है।

प्राचीन वैदिक काल में हर घर में पानी की भाप से चलने वाले विमान थे ।

भाप से चलनेवाले विमान की स्पीड कम होती है वो वजन में भारी होते हैं पर महत्वपूर्ण बात यह है कि वो प्रदूषण नही फैलाते हैं , इसीलिए हमारे यहां के शिल्पी इंजीनियर लोग ऐसे ईधन को चुनते थे जो प्रदूषण न फैलाये।

मनुस्मृति व महाभारत अनुसार अपने देश के लोग विदेश मे विमान आदि से जाते थे, समुद्र मे ऐसे यान से जाते थे जो भाप से चलता था। तो उनको समुद्र पार देशों की दूरी भी ज्ञात थी।

आईये इस वेद मन्त्र पर विचार करके पृथ्वी के एक चक्कर की दूरी निकालें।

मंत्र

'आ नासत्या त्रिभिरेकादशैरिह देवेभिर्यातम् मधुपेयमश्विना।'
'प्रायुस्तारिष्टम् नी रपांसि मृक्षतम् सेधतम् द्वेषो भवतम् सचाभुवा।'

ऋग्वेद १/३४/११

अर्थ : हे शिल्पी लोग जल और अग्नि के योग से सिद्ध उत्तम यान में बैठकर तीन दिन और तीन रात्री में महासमुद्र के पार और 11 दिन और 11 रात्री में पृथ्वी के अंत तक पहुंचो।

शत्रु और पापों को अच्छे प्रकार दूर करो।

मधुर गुण युक्त पीने योग्य औषधि के रस को पाओ, और आयु को बढ़ाओ और उत्तम सुखों को प्राप्त करो तथा शत्रुओं का नाश करो।

मन्त्र के अनुसार तीन दिन रात अर्थात् 72 घण्टे में महासमुद्र पार देशो मे जा सकते हैं। और 11x24= 264 घण्टे में पृथ्वी कें अन्त अर्थात् जहां से यात्रा शुरु करे घूम कर वहीं पर आ जाये मतलब एक चक्कर लगाना। यहां देखे तो महासमुद्र की दूरी का 3.66 गुना पृथ्वी की परिधि की दूरी आ रही है। क्योंकि तीन दिन रात की 11 दिन रात से तुलना करने पर दूरी का पता लगता है।

अब चाल =दूरी/समय से भाप चालित ट्रेन आदि की चाल 140km/h -165km/h रहती है।

अगर विमान की चाल 140 माने तब

'दूरी = चाल ' समय' से

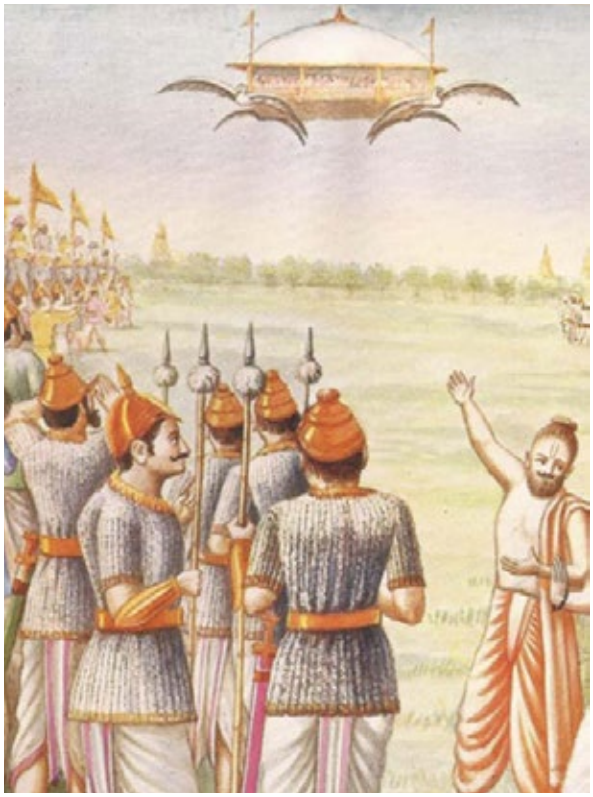

महासमुद्र की दूरी = 140x72

= 10080 km

'अर्थात् हमारे प्राचीन। शिल्पी लोग तीन दिन रात में लगभग 10 हजार किलोमीटर दूर देश मे जाकर व्यापार करते थे।।'

भारत से हिन्दमहासागर पार देशों की दूरी लगभग यही आती है। अब पृथ्वी के अंत की दूरी मतलब परिधि एक चक्कर की दूरी निकालते हैं

दूरी = 140×264

दूरी = 39960 km

'पृथ्वी के एक चक्कर की दूरी लगभग 40 हजार किलोमीटर आयी ।।' आज के वैज्ञानिक भी यही कहते हैं कि अगर हवाईजहाज मे बैठकर पृथ्वी का एक चक्कर लगाओ तो 40 हजार किलीमीटर का सफर तय होगा। इस तरह हम केवल एक वेद मन्त्र से विमान की चाल पृथ्वी की त्रिज्या, परिधि, महासमुद्रो की चौड़ाई आदि ज्ञात कर सकते हैं।

प्राचीन काल व राजा भोज के समय भी जो हर घर में विमान थे जो भाप से चलते थे उनकी चाल 140 किमी पर घण्टा थी।

'वैमानिक शास्त्र मे कई तरह के विमान बनाने का वर्णन है पर साधारण लोग उन्हे नही रख सकते थे। पर भाप से चलने वाला विमान जो तीन धातु व तीन कक्षो का था वो सब रखते थे।'

क्रमशः

05 मई पर विशेष

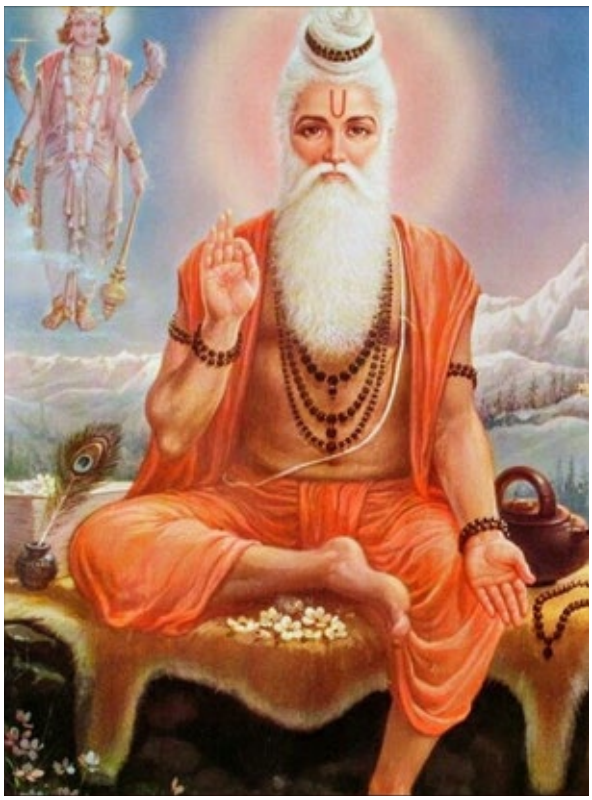

महर्षि भृगु जी की जयन्ती

महर्षि भृगु

सप्त ऋषियों में से एक थे महर्षि भृगु ऋषि

प्रो. (डॉ.) दिग्विजय कुमार शर्मा (डी लिट्)

शोध निदेशक, अधिष्ठाता कला संकाय, अध्यक्ष हिंदी विभाग
ओपीजएस विश्वविद्यालय
चुरू (राजस्थान)

जिनके सुमिरन से मिटै, सकल कलुष अज्ञान। सो गणेश शारद सहित, करहु मोर कल्यान।।
वन्दौं सबके चरण रज, परम्परा गुरुदेव। महामना, सर्वेश्वरा, महाकाल मुनिदेव।।
बलिश्वर पद वन्दिकर, मुनि श्रीराम उर धारि। वरनौ ऋषि भृगुनाथ यश, करतल गत फल चारि।।

भृगु एक ऋषि थे जिनको हिन्दू परंपरा में सप्तर्षि का दर्जा दिया जाता है। इनको 'भृगु संहिता' का लेखक और अपने गुरु 'मनु' के लिखे 'मनुस्मृति' को संरक्षित और संवर्धित करने के लिए जाना जाता है। इनकी संतानों और शिष्यों को 'भार्गव' नाम से जाना जाता है। गीता में भी इनका जिक्र आया है और महर्षियों में महानतम बताया गया है।

भृगु संहिता रची करि, भक्तन को सुख दीन्ह। दर्दर को आशीष दे, आपु गमन तब कीन्ह।।
पावन संगम तट मँह कीन्ह देह का त्याग। 'दिग्विजयी' इस भक्त को देहू अमित वैराग्य।।
दियो समाधि अवशेष की भृग्वाश्रम निजधाम। दर्शन कर इस धाम के, सिद्व होय सब काम।।

कहा जाता है कि, इन्हीं 'भृगु' और 'अगिरा' तथा 'कपि' से सारे संसार के मनुष्यों की सृष्टि हुई है। ये सप्तर्षियों में से एक मान जाते हैं। इनकी उत्पत्ति के विषय में महाभारत में लिखा है कि 'एक बार रुद्र ने एक बड़ा यज्ञ किया था, जिसे देखन के लिये बहुत से देवता, उनकी कन्याएँ तथा स्त्रियाँ आदि आई थीं। जब ब्रह्मा उस यज्ञ में आहुति देने लगे, तब देवकन्याओं आदि को देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया। सूर्य ने अपनी किरणों से वह वीर्य खींचकर अग्नि में डाल दिया। उसी वीर्य से अग्निशिखा में से भृगु की उत्पत्ति हुई थी।'

वेद, पुराणादि के प्रमाणिक पात्र महर्षि भृगु का जन्म (लाखो वर्ष पूर्व ब्रह्मलोक) सुषा नगर में हुआ था। ये आज सनातनी धर्मग्रंथों में वर्णित ब्रम्हा के पुत्र थे। ये अपने माता–पिता से सहोदर दो भाई थे। इनके बड़े भाई का नाम अंगिरा ऋषि था। जिनके पुत्र बृहस्पति हुए जो देवगणों के पुरोहित–देवगुरू के रूप में जाने जाते हैं। महर्षि भृगु द्वारा रचित ज्योतिष ग्रंथ 'भृगु संहिता' के लोकार्पण एवं गंगा सरयू नदियों के संगम के अवसर पर जीवनदायिनी गंगा नदी के संरक्षण और याज्ञिक परम्परा से महर्षि भृगु ने अपने शिष्य दर्दर के सम्मान में ददरी

मेला प्रारम्भ किया।

महर्षि भृगु की दो पत्नियों का उल्लेख आर्ष ग्रन्थों में मिलता है। इनकी पहली पत्नी दैत्यों के अधिपति हिरण्यकश्यप की पुत्री दिव्या थी। जिनसे आपके दो पुत्रों क्रमशः काव्य-शुक्र और त्वष्टा-विश्वकर्मा का जन्म हुआ। सुषानगर (ब्रह्मलोक) में पैदा हुए महर्षि भृगु के दोनों पुत्र विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। बड़े पुत्र काव्य-शुक्र खगोल ज्योतिष, यज्ञ कर्मकाण्डों के निष्णात विद्वान हुए। मातृकुल में आपको आचार्य की उपाधि मिली। ये जगत में शुक्राचार्य के नाम से विख्यात हुए। दूसरे पुत्र त्वष्टा-विश्वकर्मा वास्तु के निपुण शिल्पकार हुए। मातृकुल दैत्यवंश में आपको 'मय' के नाम से जाना गया। अपनी पारंगत शिल्प दक्षता से ये भी जगद्ख्यात हुए।

महर्षि भृगु की दूसरी पत्नी दानवों के अधिपति पुलोम ऋषि की पुत्री पौलमी थी। इनसे भी दो पुत्रों च्यवन और ऋचीक पैदा हुए। बड़े पुत्र च्यवन का विवाह मुनिवर ने गुजरात भड़ौंच (खम्भात की खाड़ी) के राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या से किया। भार्गव च्यवन और सुकन्या के विवाह के साथ ही भार्गवों का हिमालय के दक्षिण पदार्पण हुआ। च्यवन ऋषि खम्भात की खाड़ी के राजा बने और इस क्षेत्र को भृगुकच्छ-भृगु क्षेत्र के नाम से जाना जाने लगा। आज भी भड़ौच में नर्मदा के तट पर भृगु मन्दिर बना है।

महर्षि भृगु ने अपने दूसरे पुत्र ऋचीक का विवाह कान्यकुब्जपति कौशिक राजा गाधि की पुत्री सत्यवती के साथ एक हजार श्यामकर्ण घोड़े उपहार देकर किया। अब भार्गव ऋचीक भी हिमालय के दक्षिण गाधिपुरी का एक क्षेत्र वर्तमान बागी बलिया जिला (उ.प्र) आ गये।

महर्षि भृगु के इस विमुक्त क्षेत्र में आने के कई कथानक आर्ष ग्रन्थों में मिलते हैं। पौराणिक, ऐतिहासिक आख्यानों के अनुसार ब्रह्मा-प्रचेता पुत्र भृगु द्वारा हिमालय के दक्षिण दैत्य, दानव और मानव जातियों के राजाओं के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर मेलजोल बढ़ाने से हिमालय के उत्तर की देव, गन्धर्व, यक्ष जातियों के नृवंशों में आक्रोश पनप रहा था। जिससे सभी लोग देवों के संरक्षक, भगवान विष्णु को दोष दे रहे थे। दूसरे बारहों आदित्यों में भार्गवों का प्रभुत्व बढ़ता जा रहा था। इसी बीच महर्षि भृगु के श्वसुर दैत्यराज हिरण्यकश्यप ने हिमालय के उत्तर के राज्यों पर चढ़ाई कर दिया। जिससे महर्षि भृगु के परिवार में विवाद होने लगा। महर्षि भृगु यह कह कर कि राज्य सीमा का विस्तार करना राजा का धर्म है, अपने श्वसुर का पक्ष ले रहे थे।

इस विवाद का निपटारा महर्षि भृगु के परदादा मरीचि मुनि ने इस निर्णय के साथ किया कि भृगु हिमालय के दक्षिण जाकर रहे। उनके दिव्या देवी से उत्पन्न पुत्रों को सम्मान सहित पालन-पोषण की जिम्मेदारी देवगण उठायेंगे। इस प्रकार महर्षि भृगु सुषानगर से अपनी दूसरी पत्नी पौलमी को साथ लेकर अपने छोटे पुत्र ऋचीक के पास गाधिपुरी (वर्तमान बलिया) आ गये।

महर्षि भृगु के इस क्षेत्र में आने का दूसरा आख्यान कुछ धार्मिक ग्रन्थों, पुराणों में मिलता है। देवी भागवत के चतुर्थ स्कंध विष्णु पुराण, अग्नि पुराण, श्रीमद्भागवत में खण्डों में बिखरे वर्णनों के अनुसार महर्षि भृगु प्रचेता-ब्रह्मा के पुत्र हैं, इनका विवाह दक्ष प्रजापति की पुत्री ख्याति से हुआ था। जिनसे इनके दो पुत्र काव्य-शुक्र और त्वष्टा तथा एक पुत्री 'श्री' लक्ष्मी का जन्म हुआ। इनकी पुत्री 'श्री' का विवाह श्री हरि विष्णु से हुआ। दैत्यों के साथ हो रहे देवासुर संग्राम में महर्षि भृगु की पत्नी ख्याति जो योगशक्ति सम्पन्न तेजस्वी महिला थी। दैत्यों की सेना के मृतक सैनिकों को वह अपने योगबल से जीवित कर देती थी। जिससे नाराज होकर श्रीहरि विष्णु ने शुक्राचार्य की माता, भृगुजी की पत्नी ख्याति का सिर अपने सुदर्शन चक्र से काट दिया। अपनी पत्नी की हत्या होने की जानकारी होने पर महर्षि भृगु भगवान विष्णु को शाप देते हैं कि तुम्हें स्त्री के पेट से बार-बार जन्म लेना पड़ेगा। उसके बाद महर्षि अपनी पत्नी ख्याति को अपने योगबल से जीवित कर गंगा तट पर आ जाते हैं, तमसा नदी की सृष्टि करते हैं।

'पद्म पुराण' के उपसंहार खण्ड की कथा के अनुसार मन्दराचल पर्वत पर हो रहे यज्ञ में ऋषि-मुनियों में इस बात पर विवाद छिड़ गया कि 'त्रिदेवों (ब्रह्मा-विष्णु-शंकर) में श्रेष्ठ देव कौन है? देवों की परीक्षा के लिए ऋषि-मुनियों ने महर्षि भृगु को परीक्षक नियुक्त किया।'

त्रिदेवों की परीक्षा लेने के क्रम में महर्षि भृगु सबसे पहले भगवान शंकर के कैलाश पर्वत पहुँचे उस समय भगवान शंकर अपनी पत्नी सती के साथ विहार कर रहे थे। नन्दी आदि रूद्रगणों ने महर्षि को प्रवेश द्वार पर ही रोक दिया। इनके द्वारा भगवान शंकर से मिलने की हठ करने पर रूद्रगणों ने महर्षि को अपमानित भी कर दिया। कुपित महर्षि भृगु ने भगवान शंकर को 'तमोगुणी' घोषित करते हुए लिंग रूप में पूजित होने का शाप दिया।

यहाँ से महर्षि भृगु ब्रह्माजी के पास पहुँचे। ब्रह्माजी अपने दरबार में विराज रहे थे। सभी देवगण उनके समक्ष बैठे हुए थे। भृगु जी को ब्रह्माजी ने बैठने तक को नहीं कहे। तब महर्षि भृगु ने ब्रह्माजी को 'रजोगुणी' घोषित करते हुए अपूज्य (जिसकी पूजा ही नहीं होगी) होने का शाप दिया। कैलाश और ब्रह्मलोक में मिले अपमान-तिरस्कार से क्षुभित महर्षि विष्णुलोक चल दिये।

भगवान श्रीहरि विष्णु क्षीर सागर में सर्पाकार सुन्दर नौका (शेषनाग) पर अपनी पत्नी लक्ष्मी-श्री के साथ विहार कर रहे थे। उस समय श्री विष्णु जी शयन कर रहे थे। महर्षि भृगुजी को लगा कि हमें आता देख विष्णु सोने का नाटक कर रहे हैं। उन्होंने अपने दाहिने पैर का आघात श्री विष्णु जी की छाती पर कर दिया। महर्षि के इस अशिष्ट आचरण पर विष्णुप्रिया लक्ष्मी जो श्रीहरि के चरण दबा रही थी, कुपित हो उठी। लेकिन श्रीविष्णु जी ने महर्षि का पैर पकड़ लिया और कहा भगवन्! मेरे कठोर वक्ष से आपके कोमल चरण में चोट तो नहीं लगी। महर्षि भृगु लज्जित भी हुए और प्रसन्न भी, उन्होंने श्रीहरि विष्णु को त्रिदेवों में श्रेष्ठ 'सतोगुणी' घोषित कर दिया।

त्रिदेवों की इस परीक्षा में जहाँ एक बहुत बड़ी सीख छिपी है। वहीं एक बहुत बड़ी कूटनीति भी छिपी थी। इस घटना से एक लोकोक्ति बनी।

क्षमा बड़न को चाहिए, छोटन को उत्पात।
का हरि को घट्यो गए, ज्यों भृगु मारि लात।।

हिमालय के दक्षिण में देवकुल नायक श्रीविष्णु को प्रतिष्ठापित करने के लिए महर्षि भृगु ही सबसे उपयुक्त माध्यम थे। उनकी एक पत्नी दैत्यकुल से थी, तो दूसरी दानव कुल से थी और उनके पुत्रों शुक्राचार्यों, त्वष्टा–मय–विश्वकर्मा तथा भृगुकच्छ (गुजरात) में च्यवन तथा गाधिपुरी (उ.प्र.) में ऋचीक का बहुत मान–सम्मान था। इस त्रिदेव परीक्षा के बाद हिमालय के दक्षिण में श्रीहरि विष्णु की प्रतिष्ठा स्थापित होने लगी। विशेष रूप से राजाओं के अभिषेक में श्री विष्णु का नाम लेना हिमालय पारस्य देवों की कृपा प्राप्ति और मान्यता मिलना माना जाने लगा।

पुराणों में वर्णित आख्यान के अनुसार त्रिदेवों की परीक्षा में विष्णु वक्ष पर पद प्रहार करने वाले महर्षि भृगु को दण्डाचार्य मरीचि ऋषि ने पश्चाताप का निर्देश दिया। जिस स्थान भृगुजी की एक सूखे बाँस की छड़ी में कोंपले फूट पड़ेगी और आपके कमर से मृगछाल पृथ्वी पर गिर पड़े। वही धरा सबसे पवित्र होगी वहीं आप विष्णु सहस्त्र नाम का जप करेंगे तब आपके इस पाप का मोचन होगा। मन्दराचल से चलते हुए जब महर्षि भृगु विमुक्त क्षेत्र (वर्तमान बलिया जिला उ.प्र.) के गंगा तट पर पहुँचे तो उनकी मृगछाल गिर पड़ी और छड़ी में कोंपले फूट पड़ी। जहाँ उन्होंने तपस्या करना प्रारम्भ कर दिया। कालान्तर में यह भू–भाग महर्षि के नाम से भृगुक्षेत्र कहा जाने लगा और वर्तमान में बागी बलिया (उ.प्र.) (जो कि स्वतंत्रता संग्राम में प्रथम आजाद जिला है) नाम से जाना जाता है। महर्षि भृगु जीवन से जुड़े ऐतिहासिक, पौराणिक और धार्मिक सभी पक्षों का चिंतन मनन करें। क्योंकि हमारे धार्मिक ग्रन्थों में हमारे मनीषियों के वर्णन तो प्रचुर है, परन्तु उसी प्रचुरता से उसमें कल्पित घटनाओं को भी जोड़ा गया है।

महर्षि भृगु ने इस भू–भाग पर वर्तमान बलिया जिला (उ.प्र.) आने के बाद यहाँ के जंगलों को साफ कराया। यहाँ मात्र पशुओं के आखेट पर जीवन यापन कर रहे जनसामान्य को खेती करना सिखाया। यहाँ गुरूकुल की स्थापना करके लोगों को पढ़ना– लिखना सिखाया। उस कालखण्ड में इस भू–भाग को नरभक्षी मानवों का निवास माना जाता था। उन्हें सभ्य, सुसंस्कृत मानव बनानें का कार्य महर्षि भृगु द्वारा किया गया। महर्षि भृगु के परिवारिक जीवन से अपरिचित जन भी महर्षि द्वारा प्रणीत ज्योतिष–खगोल के महान ग्रंथ 'भृगु संहिता' के बारे में जानते है। इस नाम से अनेक पुस्तकें आज भी साहित्य विक्रेताओं के यहाँ बिकती हुई दिखाई देती है।

महर्षि ने 'भृगु संहिता' ग्रंथ की रचना अपनी दीर्घकालीन निवास की कर्म भूमि विमुक्त भूमि बलिया में ही किया था। इस सन्दर्भ में दो बातें ध्यान देने की है। पहली बात यह है कि अपनी जन्मभूमि ब्रह्मलोक (सुषानगर) में निवास काल में उनका जीवन झंझावातों से भरा हुआ था। अपनी पत्नी दिव्या देवी की मृत्यु से व्यथित और त्रिदेवों की परीक्षा के उपरान्त जन्म भूमि से निष्कासित महर्षि को उसी समय शान्ति से जीवन व्यतीत करने का अवसर मिला जब वह विमुक्त भूमि में आये। भृगुकच्छ गुजरात में पहुँचने के समय तक उनकी ख्याति चतुर्दिक फैल चुकी थी। क्योंकि उस समय तक उनके भृगु संहिता को भी प्रसिद्धि मिल चुकी थी और उनके शिष्य दर्दर द्वारा भृगु क्षेत्र में गंगा–सरयू के संगम कराने की बात भी पूरा आर्यवर्त जान चुका था। आख्यानों के अनुसार खम्भात की खाड़ी में महर्षि के पहुँचने पर उनका राजसी अभिनन्दन किया गया था, तथा वैदिक विद्वान ब्राह्मणों ने स्वस्तिवाचन करते हुए उन्हे आत्मज्ञानी ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित के रूप में उनकी अभ्यर्थना की थी। जिससे यह बात प्रमाणित होती है कि महर्षि द्वारा भृगु संहिता की रचना सुषानगर से निष्कासन के बाद और गुजरात के भृगुकच्छ जाने से पूर्व की गई थी।

महर्षि की इस संहिता द्वारा किसी भी जातक के तीन जन्मों का फल निकाला जा सकता है। इस ब्रह्माण्ड को नियंत्रित करने वाले सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, बुद्ध, बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि ग्रहों और नक्षत्रों पर आधारित वैदिक गणित के इस वैज्ञानिक ग्रंथ के माध्यम से जीवन और ऋषि के लिए वर्षा आदि की भी भविष्यवाणियां की जाती थी। महर्षि के कालखण्ड में कागज और छपाई की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। ऋचाओं को कंठस्थ कराया जाता था और इसकी व्यवहारिक जानकारी शलाकाओं के माध्यम से शिष्यों को दी जाती थी। कालान्तर में जब लिखने की विधा विकसित हुई और उसके संसाधन मसि भोजपत्र ताड़पत्र आदि का विकास हुआ, तब कुछ विद्वानों के द्वारा ऋचाओं को लिपिबद्ध करने का काम किया गया है।

आदेश! आदेश!!

"आत्मेति परमात्मेति जीवात्मेति विचारणे।
त्रयाणामैक्यसम्भूतिरादेश इति कीर्तितः।।"

अपने प्रापंचिक विचार में हम आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा में भेद करते हैं। तीनों का एकत्व ही सत्य है और इस सत्य का अनुभव या दर्शन ही (नाथ सम्प्रदाय में) आदेश कहलाता है। इसे ध्यान में रखते हुए ही जब कभी नाथ योगी एक-दूसरे का अभिवादन करते हैं, तो वे आदेश 2 का उच्चारण करते हैं। इस अभिवादन से नाथ योगी निरंतर एक-दूसरे को जीवात्मा, विश्वात्मा और तादात्म्य का स्मरण कराते रहते हैं।

– योगी शिवनंदन नाथ

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन की जिला मुजफ्फरनगर इकाई द्वारा मुजफ्फरनगर में श्री हनुमान जन्मोत्सव पर्व पर जिला कार्यकारिणी के पदाधिकारियों एवं सदस्यों द्वारा आयोजित प्रसाद वितरण कार्यक्रम की कुछ झलकियां

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

.....गतांक से आगे

सुंदरकाण्ड में निहित प्रतीकार्थ की सुंदरता

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

'प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माँही। जलधि लाँघ गए अचरज नाँही।। *हनुमान चालीसा*

इस प्रसंग से स्पष्ट है कि जिस पर भगवान की कृपा होती है वह उसे ही अपने कार्यों का निमित्त बनाते हैं और जिसे वह चुन लेते हैं उसे साधन भी देते हैं। अवसर, अनुकूलता, सामर्थ्य, शक्ति, मनोबल सब देते हैं। 'मुद्रिका' साधन है जिस पर राम नाम अंकित है यानि साधन भी आपके पुरुषार्थ से सुलभ नहीं होते। उन्हें भी ईश्वर ही कृपापूर्वक प्रदान करते हैं। फिर सूझबूझ, सामर्थ्य तथा आत्मविश्वास सब भर देते हैं। भगवद्–नाम का आश्रय लेते ही हनुमान का आत्मविश्वास इतना बढ़ जाता है कि वह तुरंत छलाँग लगाकर पार हो जाते हैं। इसमें प्रतीकार्थ जो ध्वनित है उसका सौन्दर्य और भी अधिक है। इसका आध्यात्मिक अर्थ और भी सुन्दर है। सुन्दरकांड के मूल–केन्द्र में उन श्री सीता जी का पता लगाना है जो भक्तिरूपा हैं और जो लंका में रावण की वाटिका में बंदिनी रूप में हैं। भक्ति देवी की खोज में तत्पर हनुमान जी किष्किंधा से लेकर लंका की यात्रा करते हैं। मार्ग में आने वाली हर बाधा का सामना करते हुए लक्ष्य तक पहुँचते हैं जहाँ सभी बंदर चिंतामग्न और दुःखी खड़े हैं कि चार सौ कोस के समुद्र को कैसे लाँघेंगे? वहीं वयोवृद्ध ऋक्षराज जामवंत हनुमान जी से कहते हैं कि तुम पवनपुत्र हो और उन्हीं के समान तुम्हारा तेज और बल है। जामवंत जी का उद्बोधन पाकर हनुमान जी प्रेरित होते हैं। सभी विषादग्रस्त बंदरों को विश्वास दिलाकर उन्हें नमन करते हुए वह समुद्र को लाँघने के लिए प्रस्तुत होते हैं। हनुमान जी की विनम्रता देखिए वह सभी बंदरों को नमन करके यात्रा आरंभ करते हैं। समुद्र के किनारे जो एक सुंदर पर्वत है हनुमान जी उस

पर चढ़ गए और छलाँग लगा दी। यह पर्वत देहाध्यास का प्रतीक है। यहाँ तुलसीदास ने 'देहाध्यास' की व्याख्या समझाई है। मनुष्य परमात्मा का अंश है और उसी का स्वरूप है –

'ईश्वर अंश जीव अविनाशी। चेतन अमल सहज सुखरासी।।

किंतु वह इस शाश्वत संबंध को भूलकर स्वयं को 'देह' समझता है। यह ज्ञान सद्गुरु द्वारा ही प्राप्त होता है। गुरु के बिना निज स्वरूप का स्मरण जीवन नहीं हो पाता। सीता रूपी भक्ति को प्राप्त करने के लिए 'देहाभिमान' में रहता है। तब तक वह 'भक्ति' की प्राप्ति नहीं कर सकता। देह सबसे बड़ी बाधा है। 'हनुमान की छलाँग' का अर्थ है 'देहाभिमान' को एक छलाँग में लाँघ जाना। जब जीव को ईश्वर की कृपा से इस बात का ज्ञान हो जाता है कि वह 'देह' नहीं 'आत्मा' है तो उसकी यह आध्यात्मिक यात्रा सरल हो जाती है। जामवंत हनुमान में यह विश्वास पैदा करते हैं कि वह इस समुद्र को लाँघ सकते हैं। बस अपने बल का स्मरण होते ही हनुमान जी छलाँग लगा देते हैं और इस तरह सबसे बड़ी बाधा शरीर रूपी समुद्र को पार कर वह विजय प्राप्त कर लेते हैं। ध्वन्यार्थ की सुन्दरता देखिए जीव देहाभिमान से ऊपर उठते ही, उसे छोड़ते ही भक्ति–स्वरूपा सीता की खोज के अपने लक्ष्य में सफल हो जाता है। देहाभिमान का त्याग भक्ति–प्राप्ति की पहली सीढ़ी है। जब व्यक्ति देहाभिमान से ऊपर उठ जाता है तब उसे शांति–स्वरूपा भक्ति का साक्षात्कार होता है। अन्य बंदर समुद्र को पार नहीं कर पाते क्योंकि वे देहाभिमान से मुक्त नहीं हो पाए।

हनुमान जी की लंका–यात्रा में यह दूसरा पर्वत था जिस पर चढ़कर वे जलधि लाँघते हैं। दो और पर्वत भी आते हैं जिनका तुलसीदास ने उल्लेख किया है। पहला पर्वत वह था जब बंदरों की प्यास बुझाने के लिए वह कोई जल का स्रोत खोजते हैं। हनुमान जी अकेले जिस पर चढ़ जाते हैं – 'चढ़ि गिरि सिखर चहुँ दिसि देखा .....'।

वहाँ जाकर बाहर से उन्हें कोई जल–स्रोत दिखाई नहीं देता किंतु वहाँ पहुँच कर उन्हें एक गुफा दिखाई देती है जिसके भीतर जल के पक्षी प्रवेश कर रहे हैं। बल–बुद्धि के धाम हनुमान जी को गुफा के भीतर जल का विश्वास हो जाता है। हनुमान जी उसमें प्रवेश कर जाते हैं और वहाँ उन्हें स्वयंप्रभा के दर्शन होते हैं। साथ ही वहाँ उन्हें खाने के लिए सुन्दर फल, स्नान के लिए सरोवर और पीने के लिए स्वच्छ जल मिलता है। बंदर यहाँ अपनी भूख–प्यास शांत करते हैं। यहाँ पर्वत की यह अंधेरी गुफा का ध्वन्यार्थ है प्रतिकूल परिस्थितियाँ। आपके लक्ष्य–प्राप्ति में अनेक गहन बाधाएँ उपस्थित होंगी। आवत ही हरषहि नहिं नंनन नहिं स्नेह यदि ऐसी स्थिति में जब आपको मार्ग नहीं सूझेगा, लक्ष्य धूमिल पड़ता जाएगा उसकी कृपा का जल अवश्य प्राप्त होता है। आपकी यात्रा उस कृपा को पाकर सुगम हो जाएगी।

इस तरह यह दूसरा पर्वत विचार का पर्वत है। प्रतिकूलता में धैर्यपूर्वक विचार करने पर दिशा–ज्ञान अवश्य होता है जहाँ बंदर थककर बैठ जाते हैं, किंतु वहाँ हनुमान जी विचार करते हैं। जल के पक्षियों का एक विशेष मार्ग की ओर बढ़ना उन्हें सोचने पर बाध्य करता है कि इस ओर जल का कोई स्रोत अवश्य होना चाहिए और वह उस तक पहुँच जाते हैं।

तीसरा पर्वत है 'वैराग्य' का जिस पर चढ़कर वह लंका को देखते हैं। बहुत बड़ा किला है। यह किला विशेष है जिसके बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता –

गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी। कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी।। *5/4/5*

किसी शत्रु की नगरी में प्रवेश करना हो तो पहले वहाँ के आसपास की रीति, गतिविधि का परिचय लेना ही बुद्धिमता है। यहाँ हनुमान की इसी बुद्धिमता का परिचय मिलता है। वे पर्वत पर से लंका का सारा नज़ारा ले लेते हैं। किला अत्यंत ऊँचा है। सोने का परकोटे का परम प्रकाश हो रहा है। उसके अंदर बहुत से सुन्दर–सुन्दर घर हैं। नगर की चारों दिशाओं में योद्धा रखवाली करते हैं।

तुलसीदास ने सोने की लंका में प्रवेश करने का सर्वाधिक योग्य पात्र हनुमान जी को माना है क्योंकि लंका का ऐश्वर्य साधक को अपनी ओर आकृष्ट कर लक्ष्य–प्राप्ति से डिगा सकता है। संतों ने कंचन और कामिनी को साधना की दो दुर्गम घाटियाँ कहा है। सच्चा साधक विचारपूर्वक, विश्वासपूर्वक और वैराग्यपूर्वक भक्तिमार्ग की ओर यानि लक्ष्य की ओर बढ़ता है और अन्ततः मंजिल यानि भक्तिरूपा, शांतिस्वरूपा सीता देवी के चरणों तक पहुँचने में सफल होता है। सोने की नगरी लंका मूर्तिमान भौतिक संपदा है। वह हनुमान जी के मन में किसी प्रकार का प्रलोभन नहीं जगाती। 'ज्ञानीनामाग्रगण्यम् हनुमान वैराग्य–दृष्टि–सम्पन्न हैं। वह जानते हैं कि हर चमकती वस्तु और संसार का सारा वैभव नाशवान है। नगर के बहुसंख्यक रखवालों को देखकर मच्छर के समान छोटा सा रूप धारण करके रात्रि में हनुमान लंका में प्रवेश करते हैं। लंकिनी नाम की राक्षसी उनका मार्ग रोकती है। वह मुष्टिका प्रहार करते हैं। वह संभलकर उठती है और हनुमान जी को आशीर्वाद देती है। अशोकवाटिका में पहुँचने से पहले वह सीता जी को खोजते घर–घर घूमते हैं। फिर वह दसानन के महल तक पहुँचते हैं किंतु सीता उन्हें वहाँ भी नहीं मिलती –

मंदिर मंदिर प्रति कर सोधा। देखे जहँ–तहँ अगनित जोधा।।
गयउ दसानन मंदिर माहीं। अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं।।
सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही।। *5/5/3–4*

यहाँ का ध्वन्यार्थ भी अत्यंत गूढ़ है। लंका का ऐश्वर्य लंकावासियों की भी भोगबुद्धि का प्रतीक है। जहाँ भोगबुद्धि है वहाँ भक्ति का वास नहीं हो सकता। रावण भी 'मोह' का प्रतीक है। रावण के प्रासाद में भी सीता का न होना यही दर्शाता है कि मोहग्रस्त व्यक्ति भक्ति का अधिकारी कभी नहीं बन सकता। तुलसीदास ने स्पष्ट लिखा है कि हनुमान जी को सारी लंका खोजने पर भी 'वैदेही' दिखाई नहीं देती। अर्थात् खोजने पर भी न कहीं भक्ति के दर्शन होते हैं, न शांति के।

क्रमशः

हार्ट अटैक

महीनों पहले दिखते हैं ये लक्षण

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

आजकल हृदय रोग पहले की अपेक्षा बहुतायत से पाया जाता हैं। ऐसा नहीं की यह वर्तमान में ही प्रचलन में रह रहा हैं। हां हमारी दैनिक दिनचर्या का नियमित न होना, आर्थिक, मानसिक सामाजिक, व्यापारिक, नौकरी और सबसे अहम पारिवारिक विवादों के कारण हृदय से सम्बंधित रोगों की बहुलता के साथ मधुमेह ने और भी नीम पर करेला का काम कर दिया।

हार्ट अटैक अचानक जरूर होता है लेकिन बिना संकेत दिए यह भी नहीं आता। बस जरूरी यह है कि हम शरीर के इन इशारों के समझ पाते हैं या नहीं। जरा–सी चूक भी भारी पड़ सकती है। यहां जानें शरीर में कैसे नजर आते हैं – हार्ट अटैक से कई महीने पहले या कई सप्ताह पहले हमारा शरीर हमें संकेत देने लगता है कि शरीर के अंदर सबकुछ ठीक नहीं है, हमें ध्यान देने की जरूरत है। लेकिन जानकारी के अभाव में हम शरीर के इन संकेतों को अनदेखा कर देते हैं। बस यही लापरवाही कुछ वक्त बाद हम पर भारी पड़ती है और हमें हार्ट अटैक जैसी जानलेवा स्थिति का सामना करना पड़ता है...

अटैक लक्षण : तुरंत नहीं आता हार्ट अटैक, महीनों पहले दिखते हैं ये लक्षण

हार्ट अटैक अचानक जरूर होता है लेकिन बिना संकेत दिए यह भी नहीं आता। बस जरूरी यह है कि हम शरीर के इन इशारों के समझ पाते हैं या नहीं। जरा–सी चूक भी भारी पड़ सकती है। यहां जानें शरीर में कैसे नजर आते हैं ...

सबसे पहले अटैक को समझें : अटैक अचानक ही होता है, फिर चाहे हार्ट का हो या ब्रेन का हो। लेकिन कई महीने या कुछ हफ्तों पहले से शरीर में कुछ ऐसे बदलाव नजर आने लगते हैं, जो हमारे दैनिक जीवन में दखल डालते हैं। मेडिकल की भाषा में हार्ट अटैक को एमआई कहा जाता है यानी मायोकार्डियल इंफ्रेक्शन

एंजायना पेन : चलने पर काम करते समय छाती में हैवीनेस या भारीपन होता है। जो काम बंद करने के बाद ठीक हो जाता है। एंजायना पेन कहलाता है। यह दिल की बीमारी का एक सामान्य लक्षण होता है और ज्यादतर केसेज में देखने को मिलता है।

सांस फूलना : सांस फूलने की दिक्कत होने लगती है। जैसे आपको कुछ अचानक लगता है कि रोज तो आप दो फ्लोर या लंबी दूरी चलकर ऑफिस जाते थे लेकिन अभी तो एक मंजिल उतरते या चढ़ते ही आपकी सांस फूलने लगती हैं। अगर ऐसा लंबा समय तक हो रहा है और आपकी हेल्थ में किसी और तरह की दिक्कत नहीं है तो आपको इस समस्या

को अनदेखा नहीं करना चाहिए।

मिमिक सिंप्टम्स : कई बार लगता है खाने के बाद गले में जलन हो रही है। ऐसा दिन में जब भी आप कुछ खाते हैं उसके बाद भी महसूस हो सकता है। जबकि खाना खाने के बाद अक्सर ऐसा होता है। यह भी अचानक हार्ट अटैक का लक्षण हो सकता है। अनियमित भोजन करने वालों के ये लक्षण अधिकांश दिखाई देते हैं ।

–जरूरी नहीं है कि ऐसा सभी के साथ हो या फिर यह सिर्फ हार्ट अटैक का लक्षण ही हो इसकी कोई और वजह भी हो सकती है लेकिन यह हार्ट अटैक के प्रीसिंप्टम्स में भी शामिल हो सकता है।

पोस्टप्रैंडियल एंजाइना : पोस्ट प्रैंडियल एंजाइना सीने में उठनेवाले उस तेज दर्द को कहते हैं, जो खाना खाने के बाद उठता है। यानी खाना खाने के बाद अगर आप तुरंत चलने लगते हैं तो आपको दिक्कत होने लगती है। इस दौरान सीने में जलन के साथ तेज दर्द होता है।

–इस स्थिति में जब व्यक्ति रुकता है और आराम करता है तो यह दर्द ठीक हो जाता है। अगर यह स्थिति किसी के साथ लंबे समय से बनी हुई है तो यह भी हार्ट की बीमारी का लक्षण हो सकती है।

चक्कर आना और घबराहट होना : हार्ट की तकलीफ से जुड़े कुछ लक्षण ऐसे होते हैं, जो कई अन्य बीमारियों में भी देखने को मिलते हैं। इस कारण इन लक्षणों के आधार पर बिना जांच किए यह समझ पाना मुश्किल होता है कि यह हार्ट अटैक का लक्षण है। क्योंकि ये लक्षण कई अन्य बीमारियों में भी देखने को मिलते हैं।

– इनमें चक्कर और उल्टी आना या चक्कर के साथ उल्टी जैसा (नोजिया) महसूस होना भी हार्ट की बीमारी के लक्षण हो सकते हैं। हालांकि ये लक्षण पेट की बीमारी, ब्रेन से जुड़ी दिक्कत या शुगर कम होने पर भी महसूस हो सकते हैं। हार्ट वाले केस में कई बार सिर्फ चक्कर भी आ सकता है और नोजिया फील नहीं होता।

इस दर्द पर जरूर दें ध्यान : ऊपर बताए गए लक्षणों के अलावा कुछ लोगों को लेफ्ट हेंड यानी बाएं हाथ में दर्द रहने की समस्या होने लगती है। यह दर्द जॉ लाइन यानी जबड़े तक जाता है। जबकि कुछ लोगों में लेफ्ट और राइट दोनों हाथों में दर्द हो सकता है, साथ ही यह दर्द जश्व लाइन तक जाता है।

–आमतौर पर यह दर्द चलते वक्त या कोई काम करते वक्त महसूस होता है। लेकिन रुकने और आराम करने पर ठीक हो जाता है। ऐसे में अक्सर इसे थकान या कमजोरी के कारण होनेवाला दर्द मानकर अनदेखा कर दिया जाता है। क्योंकि यह उस स्थिति में भी हो सकता है। जबकि हार्ट अटैक का लक्षण भी हो सकता है।

थकान होना : जब भी हम थक जाते हैं तो इसे कमजोरी की निशानी मान लेते हैं। कोई भी काम करते हुए जल्दी–जल्दी थकान होना...यानी कमजोरी आना। लेकिन कई बार यह कमजोरी हार्ट की बीमारी का लक्षण भी हो सकती है।

–हो सकता है कि हार्ट की किसी नली में सूजन या इंफेक्शन की दिक्कत हो रही हो। साथ ही यह थकान दिल के कमजोर हो जाने का लक्षण भी हो सकती है।

खांसी और हाथ पैर में सूजन होना : आमतौर पर खांसी को मौसम बदलने के दौरान होनेवाली समस्या माना जाता है। इसके अतिरिक्त लंबे समय तक रहनेवाली खांसी टीबी का लक्षण हो सकती है। लेकिन खांसी हार्ट की बीमारी का संकेत भी होती है। यह समस्या हर व्यक्ति में हार्ट की बीमारी के लक्षण के रूप में नजर आए, यह जरूरी नहीं है।

–अगर किसी को लगातार खांसी हो रही है और हाथ–पैर में सूजन आ जाने की समस्या बनी हुई है तो इन लक्षणों को अनेदखा नहीं करना चाहिए। ये हार्ट की बीमारी के साथ ही किसी अन्य गंभीर रोग का लक्षण भी हो सकते हैं।

तेज पसीना और धड़कनों की रफ्तार : बिना किसी खास कारण अचानक से तेज पसीना आना। यानी जब आपने कोई शारीरिक श्रम ना किया हो या आप तेज गर्मी से ना आए हों और अचानक से आप पसीना–पसीना हो जाते हैं तो यह भी दिल की कमजोरी का एक लक्षण हो सकता है।

–कई बार धड़कनें बहुत तेज हो जाना या बहुत धीमी हो जाना भी दिल की कमजोरी की तरफ इशारा करती है। इस दौरान कई लोगों को ऐसा अनुभव होता है, जैसे हार्ट सिकुड़ रहा है। साथ ही तेज घबराहट भी हो सकती है। अगर यह स्थिति बार–बार बन रही हो तो हल्के में ना लें।

महिलाओं और पुरुषों में अलग लक्षण : अगर फैमिली हिस्ट्री की बात करें तो सबसे पहले फर्स्ट डिग्री रिलेटिव्स के बारे में पता किया जाता है। फर्स्ट डिग्री रिलेटिव्स यानी आपके मम्मी–पापा या भाई–बहन। अगर इनमें से किसी को कम उम्र में हार्ट अटैक हुआ है या हार्ट की अन्य बीमारियां हुई हों तो आपको खास ध्यान देना चाहिए।

–क्योंकि जिन लोगों की फैमिली हिस्ट्री में हार्ट अटैक या हार्ट फेल्योर के केस होते हैं, उनके इस बीमारी की चपेट में आने की अधिक आशंका होती है। ऐसे में आपको अहतियात के तौर पर अपना रुटीन चेकअप कराते रहना चाहिए।

–खास बात यह है कि जिन लोगों की फैमिली हिस्ट्री में हार्ट पेशंट होते हैं उन्हें तो हार्ट की बीमारी का खतरा होता ही है, साथ ही इनमें भी खासतौर पर ऐसे लोग, जिनके फैमिली मेंबर्स को 50 साल की उम्र से पहले अटैक हुआ हो, उन्हें अपना अधिक खयाल रखने की जरूरत होती है।

विशेष : आजकल हृदय जन्य रोग किसी भी उम्र में होने लगे हैं। इसके लिए सबसे पहले नियमित दिन चर्या रखे, समय से खाना खाये, चिंता मुक्त रहने का प्रयास करे, बीड़ी सिगरेट शराब, अंडा मान मछली, तली चीजे कम खाएं। यदि कोई भी परेशानी होवे तो हृदय रोग विशेषज्ञ से सलाह ले। तनावरहित जीवन प्रणाली अपनाएं और निद्रा अच्छी ले। हमेशा सकारात्मक सोच रखे। आहार विहार विचार का बहुत प्रभाव हमारे जीवन पर पड़ता हैं।

विलम्ब करना स्वयं के साथ खिलवाड़ करना हैं।

स्थायी स्तम्भ

डॉ. मेहता नगेन्द्र सिंह
भू–वैज्ञानिक, पर्यावरणविद्
एवं हिन्दी रचनाकार, पटना

पर्यावरण चिन्तन 4

चालीस–पैतालीस साल पहले एक फिल्मी गाना– ' मौसम बड़ा बेईमान है/मौसम बड़ा बेईमान है... आने वाला/आने वाला कोई तूफान है..' बड़ा ही लोकप्रिय और ओजपूर्ण था,जो आज भी प्रासंगिक है। उस समय बादल की बेईमानी और पक्षपात समझ में आता था,लेकिन मौसम के बारे में कुछ इतर सोचना युक्तिसंगत नहीं लगा।

भौगोलिक दृष्टिकोण से मौसम और ऋतु में क्या कुछ अन्तर है? अन्तर तो है। मोटे स्तर कम, लेकिन सूक्ष्म स्तर पर बृहद। सूक्ष्म स्तर पर जो बृहद है वह आज के 'जलवायु–परिवर्तन' से सम्बंधित है। वैसे ऋतु और मौसम पर थोड़ा विवेचन कर लेना, मैं समझता हूँ, श्रेयष्कर होगा। पहले इसकी परिभाषा को जानें। क्योंकि सामान्य रूप से ऋतु में मौसम और मौसम में ऋतु पानी–चीनी घोल जैसे हैं। ऋतु एक वर्ष से छोटा कालखंड है जिसमें मौसम की दशाएँ एक खास प्रकार की होती हैं। भारत में परम्परागत रूप से छः ऋतुएँ परिभाषित की गई हैं–

1.वसंत ऋतु (फरवरी से मार्च) 2. ग्रीष्म ऋतु (अप्रैल से जून) 3.वर्षा ऋतु (जुलाई से सितंबर) 4. शरद ऋतु (अक्टूबर से नवम्बर) 5 हेमन्त ऋतु (दिसम्बर से 15 जनवरी) 6. शिशिर ऋतु (16 जनवरी से फरवरी)। ऋतु परिवर्तन का मूल कारण पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर का परिक्रमण है। लेकिन इन दिनों वैश्विक तापन और जलवायु परिवर्त्तन के दुष्प्रभाव से हेमन्त और शिशिर ऋतु का सह अस्तित्व समाप्त सा दिखने लगा है, जो चिन्तन का विषय है। फलस्वरूप कुछ हद तक वसंत ऋतु भी प्रभावित हुई और ग्रीष्म ऋतु का प्रभाव भी मार्च से ही दृष्टिगोचर होने लगा है। मौसम– किसी स्थान विशेष पर किसी खास समय वायुमंडल की स्थिति मौसम कहलाता है। यहाँ पर 'स्थिति' की परिभाषा कुछ व्यापक परिप्रेक्ष्य में की जाती है। उसमें अनेक कारकों यथा– वायु का दाब, वायु का ताप,उसके वहाब की रफ्तार और दिशा तथा बादल, कोहरा, वर्षा, हिमपात आदि की उपस्थिति और उनकी परस्पर अंत:क्रियाएँ शामिल होती हैं। दूसरे शब्दों में मौसम वातावरण की वह स्थिति है जिसमें तापमान, वायु दबाव, आर्द्रता, वर्षन और बादल–कोहरा शामिल है। यहाँ मौसम यह इंगित करता है कि वातावरण गर्म या ठंड या सूखा या गीला। मौसम के कारक तत्त्वों का गहन अध्ययन के आधार पर मौसम विज्ञानी यह अनुमान लगाने में सक्षम होते हैं कि आगे का मौसम कैसा रहेगा। यहाँ मौसम की दीर्घकालिक स्थिति को जलवायु कहा जाता है। मौसम और जलवायु के बीच का अन्तर समय का एक उपाय है। संक्षेपण में मौसम वह स्थिति है जो वातावरण की एक छोटी अवधि में होती है और जलवायु अपेक्षाकृत दीर्घ अवधि का व्यवहार है। 'जलवायु' शब्द में जल और वायु की प्रधानता परिलक्षित होती है, जो वर्तमान में मानवीय गतिविधियों से प्रदूषण के गिरफ्त में है। इस तरह ऋतु, मौसम और जलवायु पर्यावरण का आन्तरिक अवयव हैं। इनके बीच सन्तुलन का होना आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है। कारण कुछ भी हो, सन्तुलन बिगड़ जाने या बिगाड़ देने से ही हमारा वायुमंडल और पर्यावरण अक्रान्त रहने लगा। जिसका दुष्परिणाम ऋतु– चक्र, मौसम–चक्र तथा अन्य जलवायविक–चक्र में व्यवधान झलकने लगा।

बाहरी हस्तक्षेप से कारण वायुमंडल की रासायनिक संरचना में भी विकृतियाँ प्रवेश करने लगी। यह ज्ञात होना चाहिये कि वायुमंडल की संरचना प्रकृति की महत्वपूर्ण घटना है जिसके द्वारा धरती–धरातल के ताप का नियंत्रण स्वभावत: हुआ करता है। इसके अतिरिक्त ताप का नियंत्रण प्रत्यक्ष रूप से सघन वनाच्छादन से होता है। यह जानते हुए भी हम वना– च्छादन के प्रति कितना उदासीन हैं। यह भी ज्ञातव्य है कि ऋतु, मौसम और जलवायु की नैसर्गिक गतिविधियाँ तभी सन्तुलित रहेगी जब हम बाहरी हस्तक्षेप यानी मानवीय हस्तक्षेप पर पूर्ण– रूपेण नियंत्रण और बंदिश रखें। ताकि पर्यावरण सन्तुलित रहे और प्रकृति की जैव–विविधता भी सजीव एवं संवर्द्धित रह सके।

क्रमश:

07 मई पर विशेष

देवर्षि नारद की जयन्ती

प्रथम पत्रकार देवर्षि नारद

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
उपसम्पादक (अध्यात्म संदेश)
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय विद्यालय, लखनऊ

भारत भूमि सदैव ऋषि–मुनियों एवं संत महात्माओं की पावन भूमि रही है, इन तपस्वियों ने अपने तप के बल पर समाज को सदैव सच्चाई की पर चलने की राह दिखाई। यह मनुष्य रूप में होकर भी देव तुल्य होते थे। इनके पास मन की गति से चलने की क्षमता, इंद्रियों पर नियंत्रण की अद्‌भुत शक्ति, समस्त विद्याओं का ज्ञान, नीति ज्ञान, परम तत्व को प्राप्त करने की दिव्य शक्ति एवं संसार को प्रकाशमान करने की अलौकिक शक्ति के साथ ही मन से बात करने की दैवीय शक्ति से सम्पन्न होते थे। आज इन्हीं ऋषियों में से सबसे लोकप्रिय ऋषि देवर्षि नारद जी के बारे में जानने का प्रयास करते हैं।

नारद जी का नाम सुनते ही पीले वस्त्र धारण किए सर पर जूड़ा अथवा शिखा धारण किए हाथों में वीणा लिए हुए नारायण – नारायण का जाप करते हुए एक विशाल व्यक्तित्व आंखों के सामने आता है। शास्त्रों के अनुसार नारद जी, ब्रह्मा जी के सात मानस पुत्रों में से छठवें पुत्र थे। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार इनका जन्म ज्येष्ठ माह की कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को हुआ था। यह भगवान विष्णु के अनन्य भक्तों में से एक माने जाते थे। यह स्वयं वैष्णव थे और वैष्णवों के परमाचार्य एवं मार्गदर्शक थे। देवर्षि नारद धर्म के प्रचार एवं लोक कल्याण हेतु सदैव प्रयत्नशील रहे थे। मात्र देवता ही नहीं अपितु दानवों ने भी उनका सम्मान किया और समय–समय पर सभी ने धर्म, राजनीति एवं युद्ध से संबंधित उनसे परामर्श लिया। यूं तो ;षियों के सात प्रकार होते हैं जो कि इस प्रकार से हैं 1. ब्रह्मर्षि 2. देवर्षि 3. महर्षि 4. परमर्षि 5. काण्डर्षि 6. श्रुतर्षि 7. राजर्षि। इनमें से केवल नारद जी ऐसे ऋषि हैं जिन्हें देवर्षि कहा जाता है।

देवर्षि नारद भगवान नारायण के पार्षद होने के साथ–साथ देवताओं के प्रवक्ता भी थे, इन्होने सर्वप्रथम इस लोक से उस लोक की परिक्रमा करते हुए संवादो का आदान प्रदान किया था। इसी प्रकार देवताओं, गन्धर्वों और राक्षसों के मध्य संवाद का सेतु स्थापित करने की महत्वपूर्ण भूमिका भी इन्होने निभाई थी। पौराणिक मान्यता के अनुसार नारद ऋषि को पिता ब्रह्मा ने एक स्थान पर स्थित ना रहकर घूमते रहने का श्राप दिया था जिसके कारण

वह नारायन नाम जपते हुए इधर–उधर विचरण करते रहते थे। पुराणों में वर्णित है कि हाथ में वीणा और मुख में नारायण शब्द का जाप करने वाले, साथ ही पवन पादुका पर मनचाही जगह पर पहुंचने वाले नारद जी का एक अलग ही व्यक्तित्व है। नारद मुनि को एक संचारकर्ता के रूप में भी जाना जाता है। संचार जीवन में गति लाता है और इसी के माध्यम से मानव एक दूसरे से जुड़ सकता है वर्तमान में तो संचार के बहुत से साधन हैं जैसे रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र ,और इंटरनेट जिससे पल भर में सारे संसार की सूचना मिल जाती है, परंतु उस समय धरती और परलोक की सर्वप्रथम जनसंचार करने का श्रेय नारद मुनि को ही जाता है यही कारण है कि उन्हें सृष्टि का प्रथम संवाददाता कहां जाता है, जो कि अपने पत्रकारिता के कर्तव्य को पूरी लगन और ईमानदारी के साथ पूर्ण करते थे।

श्री कृष्ण जी नारद मुनि को अपनी ही विभूति मानते थे। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, पुराण, स्मृतियां एवं सभी शास्त्रों में कहीं न कहीं नारदजी का उल्लेख निश्चित रूप से पाया जाता है। देवर्षि नारद के अनगणित कार्य थे। वे नारायण के परम भक्त, कृपा पात्र एवं लीला सहचर माने जाते थे। जब जब पृथ्वी पर ईश्वर ने मानव रूप में अवतार लिया नारद मुनि ही उनकी लीला की भूमिका तैयार करते थे एवं उनका संग्रह के साथ साथ और प्रचार भी करते थे, उन्होंने जन कल्याण हेतु अनेकों कार्य किए जो कि निम्नवत् है

1. भृगु कन्या लक्ष्मी जी का विवाह विष्णु जी के साथ करवाया।
2. देवी पार्वती को शिवजी के साथ विवाह हेतु प्रेरित किया।
3. देव और दानवों को साथ मिलकर समुद्र मंथन करवाने में प्रमुख भूमिका निभाई थी।
4. शंकर जी के माध्यम से दानव जालंधर का नाश करवाया।
5. डाकू रत्नाकर को महर्षि वाल्मीकि बनाया और उन्हें रामायण जैसे पवित्र पुस्तक को रचने की प्रेरणा दी।
6. व्यास जी से भागवत जैसे महान ग्रन्थ की रचना करवाई।
7. प्रहलाद व ध्रव को उपदेश देकर महान भक्त बनाया।
8. देवर्षि नारद, व्यास जी, बाल्मीकि तथा महा ज्ञानी महाराज शुकदेव आदि विद्वान ऋषियों के गुरु थे ।
9. वीणा जैसे मधुर स्वर वाले वाद्य का अविष्कार उनकी ही देन है ।

वर्तमान में धार्मिक चलचित्र एवं धार्मिक धारावाहिकों में नारद जी के पात्र को लड़ाई – झगड़ा करवाने वाला, चुगली करने वाला एवं एक विदूषक के रूप में दिखाया जाता है, जो कि उनके प्रकांड पाण्डित्य एवं विराट व्यक्तित्व के प्रति अन्याय है। अज्ञानता वश लोग श्रीहरि के अंशावतार की अवमानना के दोषी बनते हैं। देवर्षि नारद इतने महान हैं कि साक्षात ईश्वर भी उनकी वन्दना करते हैं। नारद जी भगवान विष्णु के परम प्रिय एवं अनन्य भक्त थे इसलिए इनकी पूजा करने से पूर्व सदैव श्री हरि विष्णु और माता लक्ष्मी की पूजा करने के पश्चात ही देवर्षि नारद जी की पूजा आराधना करनी चाहिए। धार्मिक मान्यता है कि इनकी पूजा, आराधना करने वाले को बुद्धि, भक्ति एवं शक्ति तीनों प्राप्त होता है। भगवत् गीता में कृष्ण जी अर्जुन से कहते हैं कि मैं ऋषियों में देवर्षि नारद हूं।

नारद मुनि के नाम का शाब्दिक अर्थ है नार अथवा जल और दा का मतलब है दान । ऐसी मान्यता है कि नारद मुनि सभी को जल दान, ज्ञान दान और तर्पण करने में मदद करते हैं। आज आवश्यकता है कि देवर्षि नारद का वास्तविक चरित्र समाज के सामने आए। प्राणिमात्र के कल्याण की भावना रखने वाले नारदजी ईश्वरीय मार्ग पर अग्रसर होने की इच्छा रखने वाले प्राणियों को सहयोग देते रहते हैं । उन्होंने कितने प्राणियों को किस प्रकार भगवान के पावन चरणों में पहुँचा दिया, इसकी गणना संभव नहीं है। वे सदा भक्तों, जिज्ञासुओं के मार्गदर्शन में लगे रहते हैं । तीनों लोकों में घटने वाली प्रिय–अप्रिय घटनाओं की जानकारी भगवान तक पहुँचाते हैं । नारद जी के विषय में शोध करते हुए उनके जन्म से संबन्धित वैसे तो अनेक प्रकार की कथाएँ पढ़ने को मिली लेकिन उनमें से एक कथा जो सबसे अधिक प्रिय और प्रामाणिक मिली वह ये है कि नारद जी का जन्म एक विधवा ब्राह्मणी के यहाँ हुआ। माँ बहुत गरीब थी और जहां जो काम मिल उसे करके अपना व अपने पुत्र का जीवन यापन करती एक दिन नगर सेठ ने कुछ साधु–संतों को नगर में चातुर्मास के लिए बुलाया और उस विधवा माँ को उनकी सेवा में रख दिया। वह नित्य उन साधु संतों की सेवा में लगी रहती। इसके बदले में उसे और उसके पुत्र को भोजन आदि मिल जाता था। जब भी साधु सत्संग करने बैठते तो माँ बेटे दोनों उनके सत्संग को ध्यान से सुना करते इतने छोटे बालक को शांत चित्त सत्संग सुनते देख साधु संत उसे स्नेह करने लगे। भगवत कथा के प्रभाव से उस बालक का मन शुद्ध हो गया और उसके पिछले जन्मो के समस्त पाप धुल गए। नगर से जाते समय महात्माओं ने प्रसन्न होकर बालक को भगवन्नाम का जप एवं भगवान के स्वरूप के ध्यान का उपदेश दिया और बालक नित्य ईश्वर का ध्यान और जप करने लगा ।

एक दिन साँप के काटने से उसकी माता की मृत्यु हो गई बालक अकेला रह गया। अतः वह गिरि, कन्दराओं में जाकर भगवान नाम का जप करने लगा। बालक के शुद्ध हृदय की पुकार भगवान तक पहुंची और भगवान उसके हृदय में प्रकट हो गए और उसे कहा कि समय आने पर तुम्हारा ये भौतिक शरीर छूट जाएगा और तुम मेरे प्रिय पार्षद के रूप में मुझे प्राप्त करोगे। समय आने पर नारद जी का पंच भौतिक शरीर छूट गया और कल्प के अंत में वह ब्रह्मा जी के छठवें मानस पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुए। देवर्षि नारद भगवान के भक्तों में सर्वश्रेष्ठ हैं। इन्हें भगवान का मन कहा गया है। इन्होंने नारद–भक्ति सूत्र की रचना की जिसमें भक्ति की बड़ी ही सुंदर व्याख्या है।

यह ज्ञान के स्वरूप, विद्या के भंडार, आनंद के सागर और विश्व के हितकारी हैं। वह श्रीमन्नारायन के महानतम भक्तों में माने जाते हैं और इन्हें अमर होने का वरदान प्राप्त है। भगवान विष्णु की कृपा से यह सभी युगों और तीनों लोकों में कहीं भी प्रकट हो सकते हैं। सर्वोत्तम भक्ति के प्रतीक और ब्रह्मा के मानस पुत्र माने जाने वाले देवर्षि नारद का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक भक्त की पुकार भगवान

तक पहुंचाना है।

जिस प्रकार भक्त अपने भगवान का चिंतन करते है उनका ध्यान और स्तुति करते हैं उसी प्रकार ईश्वर भी अपने भक्तों का ध्यान, चिंतन और यहाँ तक की उनकी स्तुति भी करते हैं इसका एक प्रमाण इस प्रकार मिला है

एक समय महीसागर संगम तीर्थ में भगवान श्री कृष्ण ने देवर्षि नारदजी की पूजा अर्चना की । वहाँ महाराज उग्रसेन ने पूछा : "जगदीश्वर श्री कृष्ण ! आपके प्रति देवर्षि नारदजी का अत्यंत प्रेम कैसे है?" भगवान श्री कृष्ण ने कहा : "राजन! मैं देवराज इन्द्र द्वारा किये गए स्तोत्र पाठ से दिव्य–दृष्टि संपन्न श्री नारदजी की सदा स्तुति करता हूँ । आप भी वह स्तुति सुनिये :

'जो ब्रह्माजी की गोद से प्रकट हुए हैं, जिनके मन में अहंकार नहीं है, जिनका विश्व–विख्यात चरित्र किसी से छिपा नहीं है जो कामना या लोभवश झूठी बात मुँह से नहीं निकालते, जो जितेन्द्रिय हैं, जिन में सरलता भरी है और जो यथार्थ बात कहने वाले हैं, जो तेज, यश, बुद्धि, विनय, जन्म तथा तपस्या इन सभी दृष्टियों से बड़े हैं, जिनका स्वभाव सुखमय, वेश सुन्दर तथा भोजन उत्तम है, जो प्रकाशमान, शुभदृष्टि–संपन्न तथा सुन्दर वचन बोलने वाले हैं, उन नारदजी को मैं प्रणाम करता हूँ।' इस स्तुति के कारण वे मुनि–श्रेष्ठ मुझ पर अधिक प्रेम रखते हैं । देवर्षि नारदजी की इस स्तुति के द्वारा भगवान भक्तों के आदर्श गुणों को प्रकट करते हैं। भक्त की इतनी महिमा है कि स्वयं भगवान भी उनकी स्तुति करते हैं। जीवन–मुक्ति की इच्छा रखने वाले साधु पुरुषों के हित के लिए वे सतत प्रयत्नशील रहते हैं अतः उनके चरणों में हम सभी का कोटि–कोटि प्रणाम हैं ।

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

चुनरी

नारी के श्रंगार में, चुनरी है अति ख़ूब।
लज्जा है,सम्मान है, आकर्षण की दूब।।

चुनरी में तो है सदा, शील और निज आन।
चुनरी में तो हैं बसे, अनजाने अरमान।।

चुनरी को मानो सदा, मर्यादा का रूप।
जिससे मिलती सभ्यता, नित ही नेहिल धूप।।

चुनरी तो वरदान है, चुनरी है अभिमान।
चुनरी में तो शान है, चुनरी में सम्मान।।

चुनरी तो नारीत्व का, करती है जयगान।
चुनरी तो मृदुराग है, चुनरी है प्रतिमान।।

चुनरी तो तलवार है, चुनरी तो है तीर।
चुनरी ने जन्मे कई, शौर्यपुरुष,अतिवीर।।

चुनरी में तो माँ रहे, बहना–पत्नी रूप।
चुनरी में देवत्व है, सूरज की है धूप।।

चुनरी दुर्बल है नहीं, नहिं चुनरी बलहीन।
चुनरी कमतर नहिं कभी, और नहीं है दीन।।

चुनरी में वह तेज है, कौन सकेगा माप।
चुनरी शीतल है बहुत, चुनरी में है ताप।।

चुनरी है ममतामयी, चुनरी में है प्यार।
चुनरी में आकर बसा, पूरा ही संसार।।

चुनरी में तो धर्म है, जीवन का है मर्म।
चुनरी में तो सत्य है, नित निष्ठामय कर्म।।

चुनरी की हो वंदना, होवे नित्य प्रणाम ।
समझ सको, तो लो समझ, चुनरी के आयाम।।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

वनस्पति सम्पदा को संरक्षित करते हमारे कुछ तीज त्यौहार

डॉ. शारदा मेहता
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति का हमारी सनातनीय संस्कृति में अति प्राचीन सम्बन्ध है। हमारे दैनिक जीवन में किसी न किसी रूप में हम प्राकृतिक सम्पदाओं पर आश्रित हैं। सम्पूर्ण भारत में हमारे पर्व प्राकृतिक सम्पदाओं पर आश्रित हैं। हमारे यहाँ प्रत्येक पूजन सामग्री में आम, अशोक के पत्ते, विभिन्न फल फूल, नारियल, सुपारी, लौंग, इलायची, पान के पत्ते, खारक बादाम, सिन्दुर, मेंहदी, हल्दी, कूंकू, धूपबत्ती, कपूर, चंदन, कपास की बाती, कच्चा सूत,कलावा, कमल के फूल, मखाने, सीताफल, रामफल, कत्था, लाख, गौंद, हवन की समिधा, आदि अगणित वस्तुएँ वनस्पति सम्पदा से ही प्राप्त होती हैं। हमारे आयुर्वेद की प्रत्येक औषधि वन सम्पदा की देन है। हमारी नवीन पीढ़ी को चाहिये कि वे ऐसी बहुमूल्य सम्पदा को संरक्षित करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ रहते हुए भावी पीढ़ी को दिशा निर्देश दे कि उन्हें नये पौधों को रोपित कर इस विशाल सम्पदा को संरक्षित करना है।

माह जनवरी में मकर संक्रान्ति का पर्व तिल की फसल का प्रमुख पर्व है। गुड़–तिल का दान तथा पतंग व गुल्ली–डंडा खेलना इस पर्व की विशेषता है।

माह फरवरी में बसन्त ऋतु का प्रमुख पर्व है बसंत पंचमी । पूजन में आम वृक्ष की मँजरी माँ सरस्वती को अर्पित की जाती है।

फरवरी मार्च में महाशिवरात्रि का पर्व भगवान् शिव तथा पार्वती के विवाहोत्सव के रूप में मनाया जाता है। शिवलिंग पर बिल्व पत्र, धतूरा, बेर ऑकड़े के फूल ,विभिन्न प्रकार के फल तथा फूल शिव पूजन में समर्पित किये जाते हैं।

मार्च माह में होली पर्व हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न होता है। होली के मध्य में अरण्ड का दण्ड स्थापित किया जाता है। इसके आस–पास विभिन्न वृक्षों की टहनियां जमाई जाती है। गोबर के कण्डे आस–पास जमाए जाते है। नारियल, पुष्प, भोजन सामग्री, धूपदीप, पूजन सामग्री,से पूजन किया जाता है। रंगों का पर्व धुलेण्डी तथा रंगपंचमी अबाल वृद्ध के हृदय में आनन्द का संचार करता है। पारिजात, पलाश आदि के पुष्पों से प्राकृतिक रंगों का उपयोग कर हम अपनी त्वचा को केमिकल (रसायनिक) युक्त रंगों से सुरक्षित रख सकते हैं।

मार्च माह में शीतला माता पूजन किया जाता है। माता का स्थान सामान्यतया बड़, पीपल, तथा नीम के वृक्षों के नीचे ही रहता है। सभी प्रकार की पूजन–सामग्री का उपयोग किया जाता है।

दशा दशमी का पर्व भी सुख, समृद्धि एवं सौभाग्य सूचक के लिए सम्पन्न किया जाता है। इस पर्व पर पीपल के वृक्ष का पूजन सभी पूजन सामग्री के साथ किया जाता है। कच्चे सूत को वृक्ष के चारों और परिक्रमा करते हुए लपेटा जाता है। वैज्ञानिकों का मत है कि पीपल का वृक्ष सर्वाधिक प्राण वायु प्रदान करता है।

वर्ष प्रतिपदा (गुड़ी पड़वा) हिन्दू नव वर्ष का प्रारम्भ पर्व है। इस दिन कड़वे नीम की पत्तियाँ चबाकर खाने की परम्परा है। इसे मिश्री तथा कालीमिर्च के साथ खाने का विधान है। दक्षिण भारतीय परिवारों में घर के ऊपर एक काष्ठ दण्ड पर लोटा रखकर उस पर साड़ी, शकर का हार तथा नीम की डाली पर पुष्प हार अर्पित कर टाँगा जाता है। श्रीखण्ड और पूरण पोली का नैवेद्य लगाया जाता है।

गणगौर पर्व लगभग कई प्रान्तों में प्रकारान्तर से मनाया जाता है। फूल पत्ती कलश में सजाकर चल समारोह निकाला जाता है। आम के पत्ते पुष्प का विशेष महत्व है। बाग बगीचों में हंसी–ठिठौली कर कन्याएँ तथा महिलाएँ व्रत का समापन करती है। पान के बीड़े का महत्व इस पर्व में अधिक है।

मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान् श्रीराम का जन्मोत्सव चौत्र रामन. वमी के रूप में मनाया जाता है। खड़े धनिये को सेक कर उसमे शकर मिलाकर, पीसकर पंजेरी नैवेद्य के रूप में अर्पित की जाती है। पुष्प तथा ऋतु फल भी चढ़ाये जाते हैं।

अक्षय तृतीयां (आखा–तीज) इस दिन भी अभिजीत मुहुर्त रहता है। अक्षय फल का दान करने से विशेष फल प्राप्त होता है।

सत्तू, पंखा, शकर, आम, जल पूरित मटका व खरबूजे का दान किया जाता है।

जून माह में महिलाओं को सौभाग्य में वृद्धि तथा पति की दीर्धायु प्रदान करने वाला व्रत वट सावित्री पूर्णिमा के नाम से प्रसिद्ध है। वट वृक्ष की परिक्रमा करते हुए धागा लपेटते है। आम्र फल तथा चने की दाल अन्य पूजन सामग्री के साथ वृक्ष के नीचे अर्पित की जाती है। चना दाल, आम तथा दक्षिणा से माता पार्वती की गोद पूरित की जाती है।

भैरव पूजन में खाकरे (ढ़ाक) के पत्ते तथा गेहूँ के खिचड़े का विशेष महत्व है।

अगस्त सितंबर माह में हरतालिका तीज का पर्व मनाया जाता है। इस व्रत में धतूरा, ऑकड़ा, पारिजात, मोगरा, गुलाब, गेंदा, जूही आदि विभिन्न प्रकार के पुष्प तथा ऑवला नीबू, अनार, सेवफल, जामफल, सीताफल,चीकू, केले आम आदि फल सहित पत्ते, मौलश्री अशोक, गुडहल, खीरा, भूट्टे, तुरई आदि आदि अनेक फूल पत्ते नारियल सुपारी,डण्डे वाले पान, बादाम खारक, लौंग, इलायची, तथा महिलाओं की सभी सौभाग्य सामग्री, बालू रेत से बनाये जाने वाले शिव परिवार को चार बार पूजन कर अर्पित की जाती है। इस दिन वनस्पति का सर्वाधिक महत्व माना जाता है।

हरतालिका तीज के दूसरे दिन दस दिवसीय गणेशोत्सव का आयोजन किया जाता है। आम्रपत्र,मेवे, फल, पान, फूल, गुड़, लड्डू,

बाटी, दुर्वा, नारियल, पंचामृत आदि का विशेष महत्व है।

ऋषिपंचमी के दिन अरून्धती के साथ सप्तर्षि कश्यप, भरद्वाज, जमदग्नि, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम तथा वशिष्ठ का पूजन किया जाता है। अपामार्ग (आंधी झाड़ा) की डंडियों से सप्तर्षि तथा अरून्धती निर्मित करते हैं। मोरधन (सँवा) का सेवन किया जाता है। अपामार्ग में पत्तों का पूजन में विशेष महत्व है। कथा सुनकर व्रत का समापन किया जाता है।

पितृ पक्ष पूर्णिमा से श्राद्ध पक्ष का प्रारंभ होता है। कन्याएँ सोलह दिन संजा की आकृति दीवार पर निर्मित करती हैं। प्रतिदिन गोबर से नई आकृति का निर्माण किया जाता है। पूजन में गुलतेबड़ी के रंगविरंगे फूल का विशेष महत्व है।

शारदीय नवरात्री का प्रारम्भ मातृशक्ति की पूजा का प्रमुख पर्व है। जौ तथा गेहूँ के ज्वारे बोए जाते हैं। आम के पत्ते, विभिन्न फल गेंदे के फूल,गुलाब के फूल तथा भूरे कद्दू का विशेष महत्व है।

इसके बाद बुराई पर अच्छाई का पर्व दशहरा पर्व रावण दहन के साथ मनाया जाता है। बॉस अन्य लकड़ियाँ, तथा रंगीन कागजों से रावण की विशालकाय प्रतिमा का निर्माण किया जाता है। राम की विजय की स्मृति में दर्शक गण शमी के पत्ते तोड़कर लाते हैं। राम मन्दिर में दर्शन कर पत्ते चढ़ाये जाते हैं। घरों में दीप जलाकर गिलकी के भजिये का नैवेद्य लगाया जाता है। सभी एक दूसरे के घर जाकर दशहरे पर्व की शुभकामना देते हैं।

दशहरे के पॉचवे दिन शरद पूर्णिमा का उत्सव मनाया जाता है। चाँदनी रात में दूध या खीर रखकर नैवेद्य अर्पित कर दूध पिया जाता है । आयुर्वेद में इस पर्व का विशेष महत्व है। अनेकों जड़ी–बूटियों का मिश्रण कर औषध बना कर श्वास, दमा, मिर्गी, के रोगियों को पिलाई जाती हैं।

दशहरे के पश्चात पाँच दिवसीय त्यौहार दीपावली मनाया जाता है। यह धनतेरस से भाईदूज तक रहता है। दीपक पूजन में प्रमुख रूप से गन्ने के टुकड़े, ऑवले के टुकड़े, बेर–पोखड़े (ज्वार के दाने) बैंगन,मूली, कपास के बीज, काचरी, साल की धानी, कंकू अमर बेल सिंधाड़े आदि बारीक काट कर दीपक में डाले जाते है।

धन्वन्तरी का पूजन धनतेरस पर किया जाता है । पूजन में खड़े धनिया का उपयोग किया जाता है। अन्नकूट के दिन बैंगन, मूली, मैथी, आलू आदि की मिश्रित सब्जी बनाकर भोग लगाया जाता है। गोवर्द्धन बनाकर पूजते हैं।

यम द्वितीया (भाई–दूज) के दिन बहन भाई को तिलक लगाकर श्रीफल भेंट करती हैं तथा भोजन कराती है।

ऑवला नवमी के पर्व पर ऑवले के वृक्ष का पूजन सभी सौभाग्य सामग्री के साथ किया जाता है । ऑवले के वृक्ष के नीचे भोजन किया जाता है । कथा कथन होता है आयुर्वेद में ऑवले से निर्मित च्यवनप्राश का विशेष महत्व हैं। और भी औषधियां ऑवले से निर्मित की जाती हैं। घर में भी भगवान् को आँवला चढ़ाया जाता है ।

देवप्रबोधनी एकादशी से उज्जैन शहर में अखिल भारतीय कालिदास समारोह का प्रारम्भ होता है।

जनवरी से दिसंबर तक हमारे सभी तीज–त्यौहार का सम्पर्क वनस्पति सम्पदा से बना हुआ हैं । हमारी भारतीय महिलाएँ इस हेतु बधाई की पात्र हैं कि उन्होंने इस त्योंहारों के महत्व को समझ कर प्राकृतिक सम्पदा को किसी न किसी रूप में जीवन्त बनायें रखा है।

मातृ शक्ति ही बालक की प्रथम गुरू होती है और घर से ही प्रकृति व प्राक्रतिक सम्पदा के संरक्षण का बीजारोपण बालक के अंर्तमन में कर सकती है। यही संस्कार भविष्य में हरी–भरी वसुन्धरा के रूप में साकार होंगे।

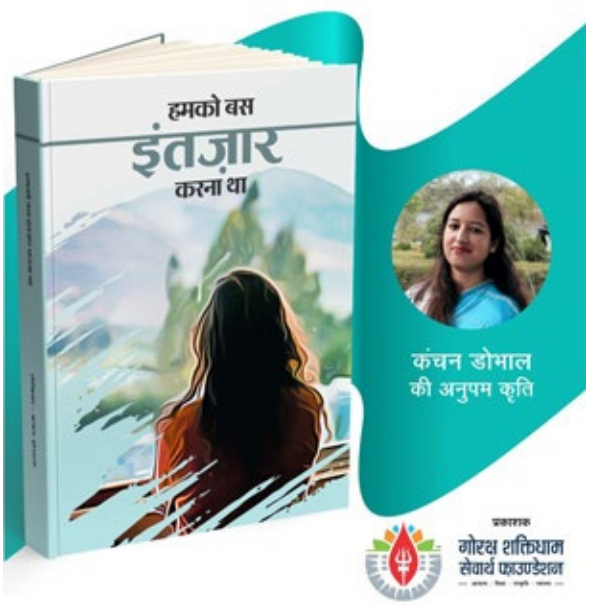

प्रकाशक
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

लघु कथाएँ लिखो पुरस्कार जीतो

मेरी अभिव्यक्ति

फाउण्डेशन द्वारा हिंदी भाषा के संवर्धन एवं संरक्षण हेतु अखिल भारतीय लघुकथा संकलन (मेरी अभिव्यक्ति–लघु कथाएँ) सहभागिता सहयोग से पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है।

लघु कथाएं हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लघुकथ. एँ बुनियादी समस्याओं, व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र से जुड़ी संवेदनाओं की तात्विक अभिव्यक्ति है।

फाउण्डेशन द्वारा लघु कथा संग्रह में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ तीन रचनाकारों को पुरस्कृत धनराशि क्रमशः 11000/-, 5100/-, 2500/- का चेक, सम्मान पत्र एवं पाँच पुस्तकें उपहार स्वरूप डाक द्वारा प्रेषित की जाएंगी।

विशेष

फाउण्डेशन, देश के प्रतिष्ठित लघुकथाकारों से पर्यावरण, प्रकृति, नारीशक्ति, जीवदया, संस्कार, शिक्षा, स्वास्थ्य, लोक संस्कृति, जीवन दर्शन, नैतिकता, कर्तव्य परायणता, मानवीय समानता, सद्भावना, अथवा अन्य राष्ट्रहित विषयों पर आधारित लघु कथाएं आमंत्रित करता है।

- लघुकथाएँ स्वरचित, अप्रकाशित एवं मौलिक होनी चाहिये।
- प्रत्येक रचनाकार को पुस्तक में चार पृष्ठ आवंटित किये जायेंगे।
- कम से कम पाँच लघुकथाएँ प्रेषित करनी आवश्यक है। जो एक या अधिक विषयों पर आधारित हो सकती है।
- पुस्तक में चार रचनाओं का प्रकाशन किया जायेगा।
- प्रत्येक लघु कथा शब्द सीमा अधिकतम 250 शब्दों से अधिक नहीं होनी चाहिये।
- लेखक / लेखिका का नाम एवं फोटो, स्थान, राज्य, ई मेल आई.डी. पुस्तक में प्रकाशित किया जाएगा।
- फाउण्डेशन द्वारा प्रत्येक सहभागी लेखक/लेखिका को आकर्षक सम्मान पत्र, पाँच पुस्तकें उपहार स्वरूप डाक द्वारा प्रेषित की जाएंगी।
- पुस्तक विवरण : साईज – 5.25 x 8.5 इंच, रंगीन आवरण (लेमिनेटेड), इनर ब्लैक एवं व्हाईट रहेगा।
- यह पुस्तक आई.एस.बी.एन. के साथ प्रकाशित की जायेगी।
- लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाईल में टाईप करा कर ही भेजें। साथ में पी.डी.एफ. फाईल, बायोडेटा, फोटो एवं सहयोग राशी की रसीद ई मेल करें : gssfoundation9@gmail.com

- **पंजीकरण सहभागिता सहयोग राशि : ₹2500/– निम्न खाते में जमा करें :–**

Goraksh Shaktidham Sevarth Foundation
HDFC Bank
A/C : 50200067261443
IFSC : HDFC0009412
Indore (Madhya Pradesh)India

सम्पर्क : योगी शिवनन्दन नाथ: 74154 10516, +91 731 491 8681

Goraksh Shaktidham Sevarth Foundation Is Registered u/s 12A Of The Income Tax Act 1961 & With That Director Of Income Tax (Exemptions) u/s 80G
UR No.AAJCG5116FF20221

पंजीकरण की अन्तिम तिथि 31 मई 2023

07 मई पर विशेष

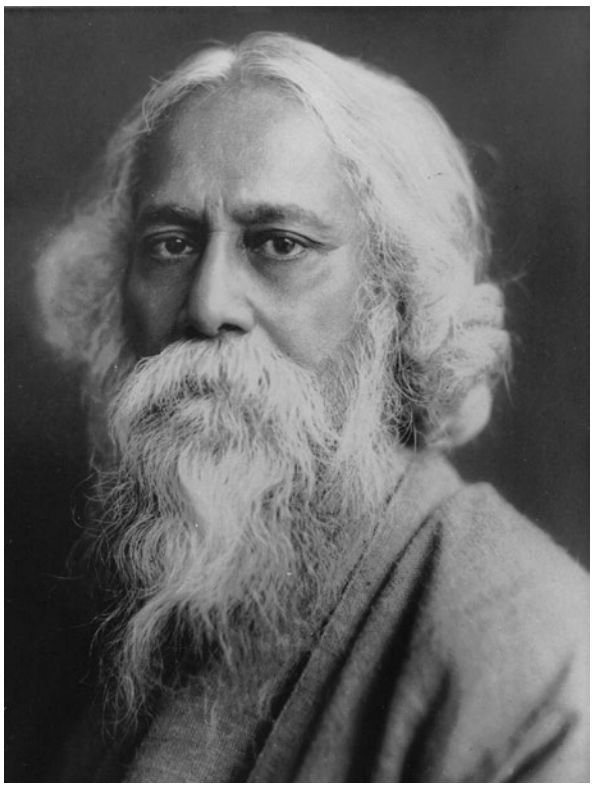

रवींद्रनाथ टैगोर जी की जयन्ती

कवींद्र - रवींद्र और उनके विमर्श

रवींद्रनाथ एक भविष्यदृष्टा थे। रवींद्रनाथ ने नारी-सशक्तीकरण, नारी शिक्षा, विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बाल-विवाह, देवदासी इत्यादि को लेकर प्रखरता से कलम चलाई। रक्तकरबी, गोरा, श्यामा, चंडालिका, चोखेर-बाली, पुजारिनी, घरे बाइरे इत्यादि उनकी चर्चित रचनाओं को इसी क्रम में देखा जा सकता है। टैगोर की संवेदनाएं सिर्फ साहित्य-कला-संगीत तक ही सीमित नहीं थीं, वे उसे वास्तविकता के धरातल पर देखना चाहते थे। इसी कारण मानवीय गरिमा और और सम्मान के कवि रूप में वह सकल विश्व में विख्यात हैं। विज्ञान में वे विश्वास करते थे पर नैतिकता की कीमत पर नहीं।

कृष्ण कुमार यादव
भारतीय डाक सेवा,
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र
वाराणसी, उत्तर प्रदेश

भारतीय संस्कृति के शलाका पुरूषों में रवींद्रनाथ टैगोर का नाम प्रतिष्ठापरक रूप में अंकित है। वे एक ऐसे व्यक्तित्व थे, जो जीती-जागती किंवदंती बन गए। साहित्यकार-संगीतकार-लेखक-कवि-नाटककार-संस्कृतिकर्मी एवं भारतीय उपमहाद्वीप में साहित्य के एकमात्र नोबेल पुरस्कार विजेता के अलावा उनकी छवि एक प्रयोगधर्मी और मानवतावादी की भी है। तभी तो शब्द और संगीत के इस विलक्षण साधक के लिए पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा कि –**'बड़ा आदमी वह होता है जिसके संपर्क में आने वाले का अपना देवत्व जाग उठता है। रवींद्रनाथ ऐसे ही महान पुरूष थे। वे उन महापुरूषों में थे जिनकी वाणी किसी विशेष देश या संप्रदाय के लिए नहीं होती, बल्कि जो समूची मनुष्यता के उत्कर्ष के लिए सबको मार्ग बताती हुई दीपक की भाँति जलती रहती है।'** वाकई रवींद्रनाथ टैगोर को शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता। उनकी रचनाधर्मिता का क्षितिज इतना विस्तृत है कि आज भी उनकी प्रासंगिकता जस-की-तस बरकरार है। कोई भी विधा उनकी लेखनी से अछूती नहीं रही। विभिन्न विधाओं में उन्होंने 141 पुस्तकें लिखीं, जो 27 खंडों में प्रकाशित हुई। इनमें 15 काव्य-संकलन (12,000 कविताएं), 11 गीत-संग्रह (2000 गीत), 47 नाटक,

34 लेख–निबंध–अलोचना संग्रह, 13 उपन्यास, 12 कहानी–संग्रह, 6 यात्रा–वृतांत व 3 खण्डों में आत्मकथा शामिल हैं। रवींद्रनाथ की अधिकतर काव्य–रचनाएं 'गीत–वितान' व 'संचयिता' में संग्रहित हैं। यह एक अजीब संयोग है कि सभी विधाओं में समान अधिकार रखने वाले टैगोर को नोबेल पुरस्कार उनकी काव्य–कृति 'गीतांजलि' पर मिला और आज भी साहित्य का नोबेल पुरस्कार पाने वाले वे भारतीय उपमहाद्वीप के इकलौते साहित्यकार हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर का जन्म 7 मई 1861 को बंगाल के जोरासांको में हुआ। मनीषी द्वारकानाथ ठाकुर और माता शारदा देवी की 14वीं संतान के रूप में रवींद्रनाथ का जन्म हुआ। रवींद्रनाथ ने एक ऐसे परिवार में जन्म लिया जहाँ परंपराएं व संस्कार थे तो आधुनिकता भी थी। भौतिकता की चकाचौंध थी तो अध्यात्म का परिवेश था, तभी तो उनकी आठवीं तक की शिक्षा घर पर ही हुई और आगे की शिक्षा के लिए वे इंग्लैण्ड भेजे गए। प्राचीन वैदिक साहित्य के साथ ही पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव भी उनके खून में था। संगीत–कला–साहित्य की अनुगूंज वातावरण में सर्वत्र विद्यमान थी, यूँ ही सात वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने जीवन की पहली कविता नहीं रच डाली। स्वयं रवींद्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि–'मेरा परिवार हिन्दू सभ्यता, मुस्लिम सभ्यता एवं ब्रिटिश सभ्यता की त्रिवेणी था।'

रवींद्रनाथ टैगोर पर अपने परिवार की सामासिक संस्कृति का बचपन से ही गहरा प्रभाव पड़ा। सांवले चेहरे के बीच उनकी आँखें मानो हर पल कुछ ढूँढना चाहती थी। कुछ आत्म, कुछ परमात्म और इससे भी परे जीवन की विसंगतियों को देखकर विचलित होने का भाव। यही कारण है कि उनका विलक्षण व्यक्तित्व एकांगी नहीं बल्कि बहुआयामी रहा। एक साथ ही उन्होंने साहित्य, संगीत, चित्रकला, नाट्य, शिक्षा सभी में महारत हासिल की। रवीन्द्र सिर्फ विधाओं के ही यायावर नहीं थे बल्कि जीवन में भी यायावर थे। उन्होंने 13 बार विश्व भ्रमण किया। 'रवीन्द्र–संगीत' की गणना आज भी बंगाल की लोकप्रिय संगीत–शैलियों में होती है। रवींद्रनाथ के गीतों के अनुवाद जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली आदि में किए गए हैं। इटली के कुछेक चित्रकारों ने तो उनके गीतों के आधार पर चित्र रचना तक की है। तभी तो कहते हैं कि रवींद्रनाथ जितना पढ़े गए हैं, उससे कहीं ज्यादा सुने गए हैं। आज भी टैगोर की रचनाओं के पुनर्वेषण के स्वतः स्फूर्त प्रयास निरंतर चल रहे हैं। उनकी रचनाएं कल भी मनुष्य को झकझोरती थीं और आज भी झकझोर रही हैं। सत्यजीत रे जैसे दिग्गज फिल्मकार ने उनकी रचनाओं पर चारूलता, घरे बाहिरे व तीन कन्या जैसी शानदार फिल्में बनाई तो राजा, रक्तकरबी, विसर्जन, डाकघर जैसी नाट्यकृतियों का मंचन आज भी उतना ही प्रासंगिक दिखाई देता है। यहाँ तक कि अपने रंग–जीवन के अंतिम वर्षों में हबीब तनवीर जैसे विख्यात निर्देशक ने भी 'राजरक्त' नाम से टैगोर के नाटक 'विसर्जन' की मंच प्रस्तुत की और उसे आरंभिक प्रदर्शन के बाद मांजते रहे। वाकई पीढ़ियों के अंतराल के बाद भी रवींद्रनाथ टैगोर की कृतियों का मंचन–संचयन यही दर्शाता है कि उनकी कृतियों की नई व्याख्याओं की गुंजाइश सदैव बनी रहेगी और वे अपनी प्रासंगिकता कभी नहीं खोएंगी। ऐसे में जो लोग रवींद्रनाथ टैगोर की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह लगाते है, उन्हें भी रवींद्रनाथ के पक्ष में बहने वाली बयार चकित–विस्मित करती रहती हैं। अगर आज भी रवींद्रनाथ के गीतों–कविताओं को गायक–गायिकाएं सजा–सँवार रहे हैं, उनके नाटक नए सिरे से खेले जा रहे हैं, 'काबुली वाला' और अन्य कहानियाँ लोगों के मर्म को छू रही हैं, 'गोरा' जैसे उपन्यास नए विमर्श और पाठ के लिए उकसाते हैं, उनका बाल–साहित्य बहुतों का मन मोहता है, उनकी कृतियों को लेकर डाक–टिकट जारी हो रहे हैं तो यह मानना पड़ेगा कि टैगोर आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं एवं वे हर समय हमारे सम्मुख नित नए रूपों में अवतरित होते रहते हैं। यहाँ टैगोर के बाल–साहित्य पर लिखे डब्लयू बी. यीट्स के शब्द गौर करने लायक हैं–"वस्तुतः जब वह बच्चों के विषय में बातें करते हैं तो निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वह संतों के विषय में भी बात नहीं कर रहे हैं।"

एक जमींदार परिवार से होते हुए भी रवींद्रनाथ उदार दृष्टि के थे। उनका कवि–मन जीवन की सहजता में विश्वास करता था। वे लोगों से घुलने–मिलने और उनकी जीवन–संस्कृति को समझने की कोशिश करते थे। फिर वह चाहे मुंडा आदिवासियों के मध्य रहकर उनकी संस्कृति को समझना हो, ग्राम हितैषी सभा के माध्यम से गाँवों में स्कूल, अस्पताल आदि की स्थापना हो, ग्राम संसद के तहत पंचायती राज को मूर्त रुप देना हो या नोबेल पुरस्कार में प्राप्त धन को शांतिनिकेतन को दान देकर उससे भारत के प्रथम ऋषि बैंक की स्थापना हो। रवींद्रनाथ एक भविष्यदृष्टा थे। रवींद्रनाथ ने नारी–सशक्तीकरण, नारी शिक्षा, विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बाल–विवाह, देवदासी इत्यादि को लेकर प्रखरता से कलम चलाई। रक्तकरबी, गोरा, श्यामा, चंडालिका, चोखेर–बाली, पुजारिनी, घरे बाइरे इत्यादि उनकी चर्चित रचनाओं को इसी क्रम में देखा जा सकता है। टैगोर की संवेदनाएं सिर्फ साहित्य–कला–संगीत तक ही सीमित नहीं थीं, वे उसे वास्तविकता के धरातल पर देखना चाहते थे। इसी कारण मानवीय गरिमा और और सम्मान के कवि रूप में वह सकल विश्व में विख्यात हैं। विज्ञान में वे विश्वास करते थे पर नैतिकता की कीमत पर नहीं।

रवींद्रनाथ टैगोर का स्वतंत्रता–आंदोलन में भी अप्रतिम योगदान रहा। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में वे प्राध्यापक रहे, अंग्रेजियत के ताने–बाने को काफी नजदीक से महसूस किया पर देश–प्रेम की उत्कट अभिलाषा उनके अंदर व्याप्त थी। जहाँ कांग्रेस के नेता व अन्य भाषणों द्वारा लोगों में देशभक्ति की भावना को उभार रहे थे, वहीं उनके क्रांतिधर्मी गीत लोगों की रगों में आजादी का जोश भर देते थे। उन्होंने गीत के माध्यम से आह्वान किया था–''जोदी तोर डाक शुने केउ ना आशे, तबे ऐकला चलो रे।' 1905 के 'बंग–भंग' आंदोलन के दौरान हिन्दू–मुसलमानों द्वारा एक दूजे को राखी बाँधकर एकता का प्रदर्शन उनकी ही सोच थी। वे एक साथ ही क्रांतिकारी थे और उदारवादी भी। जलियांवाला बाग हत्याकांड के विरोध में नाइट हुड के तौर पर दी गई 'सर' उपाधि को लौटाने में उन्होंने कोई देरी न दिखाई। सरदार भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी भी टैगोर की रचनाओं से प्रेरणा पाते थे। भगत सिंह ने अपनी जेल डायरी में टैगोर का एक लेख 'पूंजीवाद और

उपभोक्तावाद' अपने हाथों से लिख रखा था। यही नहीं टैगोर की इस उक्ति को भी भगत सिंह ने दर्ज किया था कि ''जो न्यायधीश अपनी तजवीज की हुई सजा के दर्द को नहीं जानता, उसे सजा देने का हक नहीं।'' यह अनायास ही नहीं था कि काकोरी कांड में सजा काट रहे रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खां, रोशन लाल इत्यादि क्रांतिकारी 'सरफरोशी की तमन्ना' के साथ–साथ रवींद्रनाथ टैगोर व काजी नजरूल इस्लाम के क्रांतिधर्मी गीतों को गाकर वातावरण में देश–भक्ति का उन्माद फैलाते रहते। इतिहास गवाह है कि रवींद्रनाथ टैगोर ने बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित राष्ट्र–गीत 'वन्दे मातरम' की धुन तैयार की और स्वयं 1896 के कांग्रेस अधिवेशन में इसे पहली बार गाया। राष्ट्रगान 'जन–गण–मन' के रचयिता भी टैगोर ही हैं। टैगोर को यह सौभाग्य प्राप्त है कि वे भारत और बांग्लादेश दो राष्ट्रों के राष्ट्रगान के रचयिता हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर की मातृभाषा बांग्ला थी, पर हिन्दी साहित्य से भी उनका लगाव था। किशोर–वय से ही वे वाल्मीकि–कालिदास समेत भारतीय काव्यधारा की विशद परंपरा के साथ–साथ जयदेव, विद्यापति, कबीर और नानक की परंपरा से जुड़े। अपने समकालीन तमाम हिन्दी–साहित्यकारों से भी टैगोर का संपर्क बना रहा। वे खुद कहते थे कि–''मैं हिन्दी भाषी लोगों के निकट संपर्क में आने हेतु बेहद उत्सुक हूँ। यहाँ हम लोग संस्कृति–साहित्य प्रचार के लिए जो भी कुछ कर सकते हैं, कर रहे हैं। हमारी दिलीइच्छा है कि हिंदी भाषी लोग भी यहाँ आएँ, हमारे अनुभव में हिस्सा बटाएँ तथा अपने अनुभव से हमें भी लाभान्वित करें।'' आचार्य क्षितिमोहन सेन, पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे साहित्यकारों से उनका निरंतर संपर्क रहा और इनके माध्यम से उन्होंने हिन्दी साहित्य के मर्म को समझा। अज्ञेय व टैगोर की मुलाकात पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ही कराई थी। आचार्य क्षितिमोहन सेन, पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय के साथ–साथ वे माखनलाल चतुर्वेदी व जैनेन्द्र से भी मुलाकात किए। टैगोर हिन्दी गद्य को समझने के लिए प्रेमचंद से मिलने को काफी उत्सुक थे, पर दोनों के मिलन का कोई संयोग अंत तक नहीं बन सका। इसे साहित्य की एक विडम्बना के रूप में ही माना जाएगा। उनकी दिली इच्छा थी कि साहित्य की भाषा कुछ भी हो, पर यदि वह लोगों की संवेदनाओं को झंकृत करता है तो अन्य भाषाओं में भी उसका अनुवाद होना चाहिए, ताकि लोग उससे लाभान्वित हो सके। रवींद्रनाथ ने स्वयं कबीर, मीरा विद्यापति का बांग्ला में अनुवाद किया। कबीर की वाणी से तो वे इतने प्रभावित हुए कि उनकी रचनाओं का 'हंड्रेड पोएम्स ऑफ कबीर' शीर्षक से अंग्रेजी अनुवाद भी किया।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में हिन्दी की गौरवमयी परंपरा को टैगोर समग्र देश ही नहीं विश्व के सामने भी लाना चाहते थे। एक तरफ वे कबीर–वाणी को अंग्रेजी में अनुदित करते हैं तो दूसरी तरफ उन्हें बघेलखंड के कवि ज्ञानदास के पद भी प्रभावित करते हैं। टैगोर ने स्वयं लिखा कि–''ज्ञानदास की रचनाएं सुनकर मुझे अनुभव हुआ कि आजकल की आधुनिक कविता का परिचय इनकी कविताओं में मिलता है और ये कविताएं सर्वदा के लिए आधुनिक ही हैं।'' गीत–विधा पर टैगोर की जबरदस्त पकड़ थी। वे अन्य भाषाओं में रचित गीतों की संजीदगी से प्रभावित भी होते थे। हिन्दी साहित्य में गीतों की परंपरा पर उनका कथन उद्धृत करना उचित होगा–''इसमें कोई संशय नहीं है कि एक समय हिन्दी भाषा में गीत साहित्य का आविर्भाव हुआ है, उसके गले में अमरसभा का वारमल्य है।'' पर इसके साथ ही वे सचेत भी करते हैं कि ''आज वह अनादर के कारण बहुत कुछ ढका हुआ है। इसका उद्धार अति–आवश्यक है, जिससे भारतवर्ष के अ–हिन्दी लोग भी भारत के इस चिरंतन साहित्य के उत्तराधिकार के गौरव के भागीदार हों।'' साहित्य की जीवंतता के लिए उसमें प्रवाह व सहजता का होना बेहद जरुरी है। यदि साहित्य में लचीलापन न हो तो उसके चटकने में देरी नहीं लगती। इसी प्रकार अलंकारों से परिपूर्ण साहित्य वर्ग–विशेष तक ही सीमित रह जाता है, जन–सरोकारों से वह कट जाता है। रवींद्रनाथ टैगोर भी साहित्य में अलंकारों की इस कृत्रिमता के पक्षधर नहीं थे। एक बार उन्होंने बिहारी की रचनाओं के बारे में कहा कि–''कुछ भी क्यों न हो, बिहारी सतसई जैसे ग्रंथ मेरे लिए रुचिकर सिद्ध नहीं हुए, विशेषकर किसी–किसी दोहे के चार–चार, पाँच–पाँच अर्थों के विषय में वाद–विवाद मुझे कुछ जंचा नहीं।'' वस्तुतः टैगोर कवित्व को साधना रुप में देखते थे। वह कहते थे कि मैं गीत गाने वाली चिड़िया जैसा हूँ, मेरा गीत कहीं बाहर नहीं बल्कि पत्तों के परदे में है, जहाँ बैठकर चिड़िया अनायास ही गाने लगती हैं। वे मानवतावादी विचारधारा के प्रबल पोषक थे। हिन्दी साहित्य के छायावाद युग पर टैगोर का प्रभाव देखा जा सकता है। स्वयं महादेवी वर्मा ने अपने ग्रंथ 'पथ के साथी' में टैगोर को स्मरण करते हुए उनके प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त किए हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर (7 मई 1861–8 अगस्त 1941) की प्रतिभा किसी देश–काल की मोहताज नहीं थी। उन्होंने भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा को इसकी उँचाईयों तक पहुँचाया और अंग्रेजी भारत में रहते हुए भी साहित्य का प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर न सिर्फ स्वतंत्र–चेतना का उद्‌गार किया बल्कि पराधीन भारत के आहत स्वाभिमान को एक बार फिर गर्व से अपना सिर उठाने का अवसर दिया। यह सोचने वाली बात है कि अगर बीसवीं शताब्दी के शुरू में बांग्ला जैसी प्रांतीय भाषा में एक ऐसा विश्वस्तरीय साहित्यकार हो सकता था जिसने साहित्य का सर्वोच्च सम्मान अर्जित कर नए प्रतिमान गढ़ें हों, तो यह भारत की भाषिक बहुलता और भारतीय भाषाओं की जीवंत ऊर्जा को रेखांकित करता है। एक तरफ वे प्रकृति और उसके रहस्य का गीत गाते हैं तो वहीं उनके साहित्य में मानव जीवन की बुनियादी चिंतायें भी है। अनेक मामलों में उनकी समझ अपने युग के सभी विचारकों, आलोचकों, रचनाकारों और कला मनीषियों के विचारों की सीमाओं को भेदती हुई मनुष्यत्व के मर्म तक गयी है। धर्म, शिक्षा, राष्ट्र, अध्यात्म, मानवतावाद, सार्वभौम मनुष्य इत्यादि को लेकर उनके विचारों की आज देश–दुनिया में विशेष प्रासंगिकता है और बदलते परिप्रेक्ष्य में भी उन पर व्यापक पुनर्विचार और उसके प्रचार की आवश्यकता है। यदि टैगोर को नोबेल पुरस्कार मिलने के एक सदी के पश्चात भी भारतीय उपमहाद्वीप में किसी साहित्यकार को यह खिताब नहीं मिला तो यह स्वयं में टैगोर की प्रासंगिकता को कायम रखती है।

.....गतांक से आगे

क्या है भारतीय संस्कृति में 16 संस्कार?

पंडित कैलाशनारायण
ज्योतिषाचार्य
उज्जैन, मध्य प्रदेश

हिंदू धर्म में सोलह संस्कारों का बहुत महत्व है।ये संस्कार ही प्रत्येक जन्म में संगृहीत द्धएकत्रऋ होते चले जाते हैं, जिससे कर्मो द्धअच्छे–बुरे दोनोंऋ का एक विशाल भंडार बनता जाता है। इसे संचित कर्म कहते हैं। इन संचित कर्मो का कुछ भाग एक जीवन में भोगने के लिए उपस्थित रहता है और यही जीवन प्रेरणा का कार्य करता है। अच्छे–बुरे संस्कार होने के कारण मनुष्य अपने जीवन में अच्छे–बुरे कर्म करता है। फिर इन कर्मो से अच्छे–बुरे नए संस्कार बनते रहते हैं तथा इन संस्कारों की एक अंतहीन श्रृंखला बनती चली जाती है, जिससे मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

6. **निष्क्रमण्य**– निष्क्रमण का अभिप्राय है बाहर निकलना। इस संस्कार में शिशु को सूर्य तथा चन्द्रमा की ज्योति दिखाने का विधान है। भगवान् भास्कर के तेज तथा चन्द्रमा की शीतलता से शिशु को अवगत कराना ही इसका उद्देश्य है। इसके पीछे मनीषियों की शिशु को तेजस्वी तथा विनम्र बनाने की परिकल्पना होगी। उस दिन देवी–देवताओं के दर्शन तथा उनसे शिशु के दीर्घ एवं यशस्वी जीवन के लिये आशीर्वाद ग्रहण किया जाता है। जन्म के चौथे महीने इस संस्कार को करने का विधान है। तीन माह तक शिशु का शरीर बाहरी वातावरण यथा तेज धूप, तेज हवा आदि के अनुकूल नहीं होता है इसलिये प्रायः तीन मास तक उसे बहुत सावधानी से घर में रखना चाहिए। हमारा शरीर मुख्यतया पांच चीजों से मिलकर बना होता है जिनमें अग्नि, वायु, मिट्टी, जल व आकाश होता है। जन्म के कुछ माह तक शिशु इनसे सीधे संपर्क नही कर सकता अन्यथा उसके शरीर में इनका संतुलन बिगड़ सकता है जो उसके लिए हानिकारक होता है। इसलिये तब तक उसे घर में रखा जाता है। इसके बाद धीरे–धीरे उसे बाहरी वातावरण के संपर्क में आने देना चाहिए। इस संस्कार का तात्पर्य यही है कि शिशु समाज के सम्पर्क में आकर सामाजिक परिस्थितियों से अवगत हो।

7. **अन्नप्राशन संस्कारय** – ▸अन्नप्राशन संस्कृत के शब्द से बना है जिसका अर्थ अनाज का सेवन करने की शुरुआत है। बालक को जब पेय पदार्थ, दूध आदि के अतिरिक्त अन्न देना प्रारम्भ किया जाता है, तो वह शुभारम्भ यज्ञीय वातावरण युक्त धर्मानुष्ठान के रूप में

होता है। इसी प्रक्रिया को अन्नप्राशन संस्कार कहा जाता है। बालक को दाँत निकल आने पर उसे पेय के अतिरिक्त खाद्य दिये जाने की पात्रता का संकेत है। जब बालक 6–7 महीने का हो जाता है और पाचनशक्ति प्रबल होने लगती है तब यह संस्कार किया जाता है। शास्त्रों में अन्न को ही जीवन का प्राण बताया गया है। ऐसे में शिशु के लिए इस संस्कार का अधिक महत्व होता है।

▸ शिशु को ऐसा अन्न दिया जाना चाहिए जो उसे पचाने में आसानी हो साथ ही भोजन पौष्टिक भी हो। शुभ मुहूर्त में देवताओं का पूजन करने के पश्चात् माता–पिता समेत घर के बाकी सदस्य सोने या चाँदी की शलाका या चम्मच से निम्नलिखित मन्त्र के जाप से बालक को हविष्यान्न (खीर) आदि चटाते हैं। ये मंत्र शिवौ ते स्तां व्रीहियवावबलासावदोमधौ । एतौ यक्ष्मं वि वाधेते एतौ मुंचितो अंहसः अर्थात् हे 'बालक! जौ और चावल तुम्हारे लिये बलदायक तथा पुष्टिकारक हों। क्योंकि ये दोनों वस्तुएं यक्ष्मा–नाशक हैं तथा देवान्न होने से पापनाशक हैं।' इस संस्कार के अन्तर्गत देवों को खाद्य–पदार्थ निवेदित होकर अन्न खिलाने का विधान बताया गया है। अन्न ही मनुष्य का स्वाभाविक भोजन है। उसे भगवान का कृपाप्रसाद समझकर ग्रहण करना चाहिये।

8.मुंडन/चूड़ाकर्म संस्कारय – ▸ इस संस्कार में शिशु के सिर के बाल पहली बार उतारे जाते हैं। लौकिक रीति यह प्रचलित है कि मुण्डन, बालक की आयु एक वर्ष की होने तक करा लें अथवा दो वर्ष पूरा होने पर तीसरे वर्ष में कराएँ। यह समारोह इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि मस्तिष्कीय विकास एवं सुरक्षा पर इस सयम विशेष विचार किया जाता है और वह कार्यक्रम शिशु पोषण में सम्मिलित किया जाता है, जिससे उसका मानसिक विकास व्यवस्थित रूप से आरम्भ हो जाए,। हमारी परम्परा हमें सिखाती है कि बालों में स्मृतियाँ सुरक्षित रहती हैं अतः जन्म के साथ आये बालों को पूर्व जन्म की स्मृतियों को हटाने के लिए ही यह संस्कार किया जाता है...

▸ लगभग हर शिशु के सिर पर जन्म से ही कुछ बाल होते हैं। इन बालों को अशुद्ध माना जाता है। हिंदू धर्म में प्रचलित मान्यता के अनुसार, 84 लाख योनियों के बाद मनुष्य योनी मिलती है। चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते रहने के कारण मनुष्य कितने ही ऐसे पाशविक संस्कार, विचार, मनोभाव अपने भीतर धारण किये रहता है, जो मानव जीवन में अनुपयुक्त एवं अवांछनीय होते हैं। ऐसे में पिछले सभी जन्मों के ऋण का पाप उतारने के लिए शिशु के बाल काटे जाते हैं। इसके अलावा, मस्तिष्क की पूजा करने के लिए भी यह संस्कार संपन्न किया जाता है। हिंदू परंपरा में इस संस्कार को पूरे विधि–विधान से मंत्रों का उच्चारण करते हुए संपन्न किया जाता है।

▸ सही मुहूर्त देखकर मुंडन संस्कार किया जाता है। आमतौर पर इसे किसी धार्मिक तीर्थ स्थल पर करते हैं। धार्मिक तीर्थ स्थल पर मुंडन कराने की परंपरा इसलिए है, ताकि बच्चे को धार्मिक स्थल के वातावरण का लाभ मिल सके। मुंडन संस्कार के दौरान बच्चे को मां अपनी गोद में बिठाती है और उसका मुंह पश्चिम की दिशा में अग्नि की तरफ रखती है।इसके बाद, नाई उस्तरे की मदद से बच्चे का मुंडन करते हैं। हालांकि, कुछ परिवारों में शुरुआती बाल पंडित से उतरवाए जाते हैं।इस दौरान पंडित हवन भी करते हैं। इसके बाद, गंगाजल से बच्चे का सिर धोया जाता है। फिर, बच्चे के सिर पर हल्दी और चंदन का पेस्ट लगाया जाता है। अगर बच्चे के सिर पर किसी तरह का कट लग जाता है, तो इस पेस्ट से जल्दी ठीक होने में मदद मिलती है।

फिर बच्चे के बालों को किसी भगवान की मूर्ति के आगे समर्पित किया जाता है या फिर नदी में बहाया जाता है।

कुछ परंपराओं में मुंडन के दौरान थोड़े–से बालों को छोड़ दिया जाता है। कहा जाता है कि यह चोटी मस्तिष्क को सुरक्षा देती है।

9. विद्यारंभ संस्कारय – ▸ जब बालक/ बालिका की आयु शिक्षा ग्रहण करने योग्य हो जाय, तब उसका विद्यारंभ संस्कार कराया जाता है । इसमें समारोह के माध्यम से जहाँ एक ओर बालक में अध्ययन का उत्साह पैदा किया जाता है, वही अभिभावकों, शिक्षकों को भी उनके इस पवित्र और महान दायित्व के प्रति जागरूक कराया जाता है कि बालक को अक्षर ज्ञान, विषयों के ज्ञान के साथ श्रेष्ठ जीवन के सूत्रों का भी बोध और अभ्यास कराते रहें ।विद्यारंभ संस्कार एक महत्वपूर्ण धार्मिक कर्म है इसलिए प्रक्रिया पूरे विधि–विधान से पालन किया जाए तो यह बच्चे की शिक्षा में सहायक होता है।

▸ विद्यारंभ संस्कार के दौरान मुख्य रूप से की जाने वाली पूजाः–

▸ गणेश पूजा– जिस प्रकार हर शुभ कार्य को करने से पहले भगवान गणेश की आराधना की जाती है, ठीक उसी प्रकार इस संस्कार को करने से पूर्व भी भगवान गणेश को पूजा जाता है।

▸ सरस्वती पूजा– माता सरस्वती विद्या की देवी होती है इसलिए विद्या की प्राप्ति के लिए देवी सरस्वती के पूजन का अपना एक विशेष विधान है।

▸ लेखनी पूजा– शिक्षा के 2 महत्वपूर्ण शस्त्र कलम और स्याही जिनके बिना लिखना व शिक्षा प्राप्त करना असंभव है, इसलिए इनकी भी पूजा इस दौरान की जानी चाहिए।

▸ पट्टी पूजन– कलम का उपयोग पट्टी या कापी पर किया जाता है इसलिए इस संस्कार में पट्टी पूजन अनिवार्य होता है।

▸ गुरु पूजा– हर छात्र के लिए शिक्षक ही उसका सबसे बड़ा गुरु होता है, इसलिए विद्यारंभ संस्कार में गुरु पूजा का विशेष महत्व है।

▸ अक्षर लेखन पूजा– इस पूजन के दौरान गुरु बच्चे से कापी या पट्टी पर पहला अक्षर व गायत्री मंत्र लिखवाते हैं। जब बच्चा पहला अक्षर लिखता है, तो गुरु को पूर्वी दिशा में बैठना चाहिए और बच्चे को पश्चिम में बैठना चाहिए।

क्रमशः

दर्द, ध्यान, स्पर्श और रेकी

सीताराम गुप्ता
स्वतंत्र लेखन व विचारक
पीतम पुरा, दिल्ली

दर्द के उपचार की एक विधि है दर्द को देखना। पहले स्थूल रूप से फिर सूक्ष्म रूप से। पहले पूरे शरीर और विभिन्न अंगों को देखना फिर उसको सीमित करते–करते दर्द के एक बिंदु पर समस्त ध्यान केंद्रित करना, एक बिंदु पर दर्द को खोजना। ध्यान द्वारा दर्द के मूल बिंदु को खोजने के प्रयास में दर्द देखते–देखते पूर्ण रूप से गायब हो जाता है। वास्तव में जब हम दर्द के केंद्र बिंदु पर अपना सारा ध्यान लगा देते हैं तो हमारी मनोदैहिक अवस्था ही बदल जाती है। हम मस्तिष्क के बीटा लेवल से अल्फा लेवल में पहुँच जाते हैं जो ध्यान अथवा मेडिटेशन की अवस्था है।

ध्यान अथवा मेडिटेशन की अवस्था में पहुँचने पर हमारे शरीर में न केवल उपयोगी हार्मोंस का उत्सर्जन अथवा प्रवाह तेज हो जाता है जो हमारे उपचार में मददगार है अपितु इस अवस्था में मन में जिस प्रकार के भाव आते हैं अथवा लाए जाते हैं वे पूर्णता को प्राप्त हो जाते हैं। जब हमें बताया जाता है कि दर्द को देखो और दर्द के केंद्र बिंदु पर ध्यान एकाग्र करो, दर्द गायब हो जाएगा तो हम ऐसा ही करते हैं। हमें विश्वास होता है कि हमारा दर्द गायब हो जाएगा। ऐसी अवस्था में न केवल हमारा ध्यान एकाग्र हो जाता है अपितु हमारी भावना भी उसी के अनुरूप हो जाती है। हमारे मन में आरोग्य का भाव जाग्रत हो जाता है। यही भाव या विश्वास हमारी मनोदैहिक अवस्था में परिवर्तन द्वारा हमें पीड़ा अथवा रोग से मुक्त कर देता है।

रेकी द्वारा भी हम व्याधियों का उपचार करते हैं। हाथों की हथेलियों को पीड़ायुक्त या व्याधि से ग्रस्त अंग पर लगाकर कल्पना करते हैं कि रेकी ऊर्जा प्रवाहित होकर हमारा उपचार कर रही है। हमारे मन के भाव उसी के अनुरूप हो जाते हैं। रेकी के अभ्यास द्वारा भी हम निरंतर मस्तिष्क के बीटा लेवल से अल्फा लेवल में पहुँच जाते हैं। जो ध्यान अथवा

मेडिटेशन की अवस्था में होता है वही रेकी के अभ्यास की अवस्था में होता है। इस अवस्था में पहुँचने पर हमारे शरीर में स्वाभाविक रूप से उपचार की प्रक्रिया प्रारंभ हो जाती है। यदि हमारे अंदर विश्वास नहीं और उसी के अनुरूप भाव नहीं तो हमारी मनोदैहिक अवस्था में परिवर्तन भी संभव नहीं और मनोदैहिक परिवर्तन के बिना उपचार नहीं।

उपचार के मूल तत्त्व हैं विश्वास तथा भाव। भाव विशेष में निरंतर बने रहना या भाव की गहनावस्था में पहुँच जाना ही ध्यान है। वह आप किसी भी पद्धति से कर सकते हैं। हर पद्धति में एक से तत्त्व हैं। रेकी अपेक्षाकृत नई लेकिन एक अत्यंत लोकप्रिय वैक. ल्पिक उपचार पद्धति है। रेकी भी ध्यान की ही एक विधि है। ध्यान ब्रह्माण्डीय ऊर्जा को चौनेलाइज करने का माध्यम है। इसी प्रकार रेकी भी ब्रह्माण्डीय या ईश्वरीय ऊर्जा का ही एक नाम अथवा चा. नेलाइज करने का माध्यम है। ध्यान द्वारा ही उसका उपयोग करते हैं। रेकी ऊर्जा है तो ध्यान ऊर्जा के प्रयोग की विधि।

रेकी एक ओर आध्यात्मिक चिकित्सा से जुड़ती है तो साथ ही इसे स्पर्श–चिकित्सा की श्रेणी में भी रखा जाता है लेकिन रेकी पूर्णतः स्पर्श–चिकित्सा की श्रेणी में नहीं आती। रेकी द्वारा दूर बैठ. कर भी उपचार किया जा सकता है और दूरस्थ उपचार में स्पर्श संभव नहीं अतः रेकी आंशिक रूप से स्पर्श–चिकित्सा पद्धति होते हुए भी पूर्णतः स्पर्श–चिकित्सा की श्रेणी में नहीं आती। रेकी द्वारा उपचार में प्रमुख भूमिका स्पर्श की नहीं अपितु ऊर्जा की है और इस ऊर्जा का निर्माण होता है भाव द्वारा। भाव के अभाव में न तो उपचारक ऊर्जा ही उत्पन्न और उत्सर्जित होती है और न स्पर्श ही प्रभावी होता है।

स्पर्श अपने आप में कम महत्त्वपूर्ण नहीं। जब भी कोई व्यक्ति किसी का स्पर्श करता है तो उसका अलग–अलग प्रभाव पड़ता है। माँ द्वारा बच्चे का स्पर्श सदैव भयमुक्त कर अभय प्रदान करने वाला और एक उपचारक स्पर्श ही होता है क्योंकि माँ का भाव सदैव अपने बच्चे के कल्याण की कामना का ही होता है। वह सदैव उसे नीरोग और स्वस्थ देखना चाहती है। विपरीतलिंगी स्पर्श सदैव उत्तेजक एवं आनंद प्रदान करने वाला ही होता है। वह भी पीड़ा को हरता है और उपचारक होता है क्योंकि इस स्पर्श के पीछे भी ऐसा भाव होता है। भाव नहीं तो स्पर्श में ऊर्जा नहीं, आनंददायक उपचारक गुण नहीं। स्पर्श करने वाले का मनोभाव स्नेह का है तो स्पर्श से स्नेह प्रदान करने वाली ऊर्जा प्रवाहित और प्राप्त होगी और यदि स्पर्श करने वाले का मनोभाव उपचार करने का है तो ऐसा स्पर्श उपचारक ऊर्जा प्रदान करेगा।

एक स्नेह करने वाले का स्पर्श आनंद प्रदान करेगा तथा परपीड़क का स्पर्श पीड़ा प्रदान करेगा। स्पर्श का प्रभाव स्पर्श करने वाले के मनोभावों पर निर्भर करता है न कि स्पर्श की तीव्रता, कठोरता अथवा कोमलता पर। एक दूषित अथवा विकृत मनोवृत्ति अथवा नकारात्मक भावों वाले व्यक्ति का स्पर्श पीड़ा अथवा बेचैनी ही प्रदान करेगा चाहे वह कितनी ही कोमलता से स्पर्श करे। यदि ऊर्जा प्राप्त करने वाला व्यक्ति तनिक भी संवेदनशील है तो प्रेषित ऊर्जा द्वारा उसे स्पर्श करने वाले की भावना का पता चल जाता है। हाथ मिलाते समय आपके मनोभाव और आपकी शारीरिक अवस्था कैसी है आपके हाथों का स्पर्श और उनसे प्रवाहित ऊर्जा बयान कर देती है। आप कितना ही गर्मजोशी से हाथ मिलाने का प्रयास करें लेकिन यदि आपके गर्मजोशी के मनोभाव साथ नहीं दे रहे हैं तो बात नहीं बनेगी। आपकी गर्मजोशी बनावटी साबित हो जाएगी।

आप हाथों से स्पर्श न करें तो भी कोई बात नहीं। यदि आपके मनोभाव सकारात्मक और कोमल हैं तो आपकी दृष्टि भी पड़ने वाले पर सकारात्मक और उपचारक प्रभाव ही छोड़ेगी। यदि आपके मनोभाव दूषित अथवा विकृत हैं तो बिना स्पर्श भी आपकी नजर जिस पर पड़ेगी उसे बेचैन कर देगी। भाव से उत्पन्न होकर ऊर्जा हमारी हथेलियों से भी उत्सर्जित हो सकती है और शरीर के अन्य अंगों से भी विशेष रूप से आँखों से। आपके देखने का अंदाज आपके मनोभावों को व्यक्त करने में सक्षम होगा। आपके मनोभावों के अनुरूप ऊर्जा उत्पन्न होकर पूरे वातावरण तथा उसके संपर्क में आने वालों को प्रभावित करेगी ही इसमें संदेह नहीं।

ध्यान, स्पर्श अथवा रेकी किसी भी नाम से पुकारें ये मात्र एक रोगोपचारक पद्धति नहीं अपितु संपूर्णता के साथ जीवन जीने की एक कला है। एक सम्पूर्ण उपचार पद्धति है। व्याधि को समूल नष्ट करने की पद्धति जो न केवल भौतिक शरीर में उत्पन्न विभिन्न व्याधियों को दूर कर आरोग्य प्रदान करती है अपितु भावनात्मक संतुलन तथा आध्यात्मिक अभ्युदय अथवा चेतना के स्तर में वृद्धि द्वारा व्यक्ति को निरंतर स्वस्थ, सकारात्मक तथा उत्साहपूर्ण बनाए रखने में सहायक है। अधिकतर रोगों की प्रकृति मनोदैहिक होती है। अधिकतर व्याधियों का मूल कारण होता है मन की स्थिति या सोच।

रोगों का मूल कारण है तनाव, चिंता, भय, क्रोध, निराशा, अवसाद, घृणा, उत्तेजना, प्रावरोध, कुंठा, सुस्ती और आलस्य, राग–द्वेष व अहंकार आदि नकारात्मक चित्तवृतियों से उत्पन्न मनःस्थिति। रेकी स्वयं में एक सम्पूर्ण ध्यान पद्धति है अतः रेकी ध्यान द्वारा उपचार की अन्य सभी विधियों की तरह उपरोक्त नकारात्मक चित्तवृत्तियों से मुक्ति प्रदान कर सम्पूर्ण स्वास्थ्य की ओर अग्रसर करती है। रेकी सम्पूर्ण रूपांतर की प्रक्रिया है। आंतरिक और बाह्य रूपांतरण। शारीरिक और मानसिक कायांतर। क्योंकि रेकी शरीर में व्याप्त दूषित अथवा नकारात्मक ऊर्जा को हटाकर उसके स्थान पर स्वच्छ सकारात्मक ऊर्जा भर देती है अतः रेकी का सबसे पहला कार्य मन को नीरोग और स्वस्थ बनाना है।

जब मन स्वस्थ होगा तो शरीर भी स्वस्थ होगा और ''मानसिक स्वास्थ्य से शारीरिक स्वास्थ्य तथा शारीरिक स्वास्थ्य से मानसिक स्वास्थ्य'' एक बार यह प्रक्रिया शुरू होने की देर है फिर देखिए कैसे शीघ्र ही हम संपूर्णता के तीसरे आयाम अथवा बिंदु आध्यात्मिक उन्नति अर्थात् संपूर्ण स्वास्थ्य की ओर अग्रसर होने लगते हैं। अपनी स्व की चेतना से जुड़ कर परा चेतना तथा ईश्वरीय चेतना से जुड़ जाते हैं। ईश्वरीय चेतना अर्थात् ईश्वरीय ऊर्जा अर्थात् दिव्य ऊर्जा जो स्वयं रेकी है उससे जुड़ जाते हैं। यह रेकी द्वारा रेकी से जुड़ने अथवा ऊर्जा द्वारा ऊर्जा से जुड़ने की प्रक्रिया ही है। सम्पूर्ण ऊर्जामय होना ही रेकी उपचार है।

श्री राम द्वारा स्थापित शिवधाम है : रामेश्वरम्

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

रामेश्वरम् भारत के दक्षिणी सिरे पर हिंद महासागर के पास तमिलनाडु के रामनाथपुरम् जिले में स्थित है। यह हिंदुओं का मुख्य पवित्र तीर्थस्थल है। यह चार धामों में से एक है। यह 61 किलोमीटर क्षेत्रफल का एक द्वीप यानि टापू है जो एक लम्बे पुल द्वारा प्रमुख भूमि से संलग्न है। यह द्वीप शंख की आकृति का है। बंगाल समुद्र को हिंद महासागर से जोड़ने वाला यह इलाका भूगोल में 'पाक स्ट्रीट (palk strait)' यानि जलडमरु मध्य कहलाता है।

दक्षिण रेलवे के मद्रास एगमोर–तिरुच्चिराप्पल्लि–रामेश्वरम् रेल मार्गपर तिरुच्चिराप्पल्लि से 270 किलोमीटर की दूरी पर रामेश्वरम् स्टेशन है। रेलवे स्टेशन से करीब दो किलोमीटर की दूरी पर दक्षिण भारत का आकार के अनुसार तृतीय वृहतम मंदिर 'रामेश्वरम् मंदिर' है। इसकी विशालता और भव्यता अद्‌भूत है। इस मंदिर को स्वामीनाथ मंदिर के नाम से भी जाना जाता है। यह भव्य मंदिर 151 एकड़ जमीन पर बना हुआ है। यह मंदिर द्रविड़ शैली का उत्कृष्ट नमूना है। इस मंदिर के पूर्वी द्वार पर दस मंजिला और पश्चिमी द्वार पर सात मंजिला गोपुरम् बना है। इस मंदिर के बरामदे चार हजार फुट लंबे हैं, जो विश्व के वृहतम् लंबे बरामदे माने जाते हैं। बरामदों के स्तंभों पर की गई नक्काशी अपनी कला तथा सुंदरता से दर्शकों को मुग्ध कर देती है। यह मंदिर 12वीं सदी में बनना शुरु हुआ था। श्रीलंका के राजा पराक्रम बाहु ने मंदिर का गर्भगृह बनवाया था। बाद में तमाम राजा निर्माण तथा विस्तार कार्य कराते रहे तथा 350 वर्षो में यह पूरा हुआ। यह भारत का अद्वितीय मंदिर है।

रामेश्वरम् मंदिर के गर्भगृह में रामनाथ स्वामी के प्रतीक के रुप में एक शिवलिंग है। कहा जाता है कि इसकी स्थापना स्वयं श्रीराम और सीता जी ने की थी। इसलिए इस लिंग को 'रामलिंग' भी कहते हैं। रामनाथ शिवलिंग के दाहिनी ओर पार्वती का मंदिर है। प्रत्येक शुक्रवार को पार्वती की प्रतिमा का आकर्षक श्रंगार किया जाता है। उन्हें सोने की पालकी में बिठाकर पूरे मंदिर की परिक्रमा कराई जाती है। रामनाथ मंदिर के उत्तर में भगवान शिवलिंगम् का मंदिर है और उसके पास ही विशालाक्षी का भी मंदिर है।

रामनाथ स्वामी मंदिर के विस्तृत परिसर में तमाम मंदिर हैं जिनमें शेषनारायण भगवान का मंदिर उल्लेखनीय है। इस मंदिर में भगवान विष्णु शेषनाग को बिछौना बनाकर शयन कर रहे हैं। रामनाथ मंदिर परिसर में बाइस कुंड हैं। मान्यता है कि इन कुंडों में स्नान करने से

तमाम रोग नष्ट हो जाते हैं। मंदिर के पूर्वी गोपुरम् के सामने समुद्र तट है जो अग्नि तीर्थम् कहलाता है। श्रद्धालु पहले अग्नि तीर्थ में स्नान करते हैं फिर उन्हीं गीले वस्त्रों में मंदिर में आकर उन समस्त बाइस कुंडों में स्नान करते हैं।

कहा जाता है कि सीता को रावण के चंगुल से छुड़ाने के लिए श्रीराम ने यहीं से रावण के विरुद्ध युद्ध प्रारंभ किया था। श्रीराम ने अपनी वानर सेना की सहायता से यहां लकड़ी, घास–फूस तथा पत्थरों का पुल बनवाकर समुद्र पार किया था। यह स्थान सेतुबंध रामेश्वरम् के नाम से भी जाना जाता है। लंका विजय के पश्चात् श्रीराम ने धनुष की नोंक से पुल तोड़ दिया था जो कि धनुष कोटि कहलाया। आज धनुष कोटि एक बंदरगाह के रुप में विख्यात है। इस बंदरगाह से श्रीलंका के लिए जहाज आया–जाया करते हैं। यहां से श्रीलंका की दूरी मात्र 25 किलोमीटर है।

पौराणिक कथानुसार लंका में विजय के पश्चात् श्रीराम ने रावण की हत्या से लगे पाप से मुक्ति पाने के लिए शिव की उपासना करने का संकल्प किया। श्रीराम ने हनुमान जी से कैलाश जाने को तथा स्वयं शंकर भगवान से ही उनकी कोई उपयुक्त मूर्ति लाने को कहा। हनुमान जी कैलाश गए, लेकिन उन्हें अभीष्ट मूर्ति नहीं मिल सकी। अतः हनुमान जी ने उसके लिए तपस्या प्रारंभ कर दी। इधर हनुमान जी को देरी होते देख श्रीराम और ऋषियों ने मूर्ति स्थापना कर शुभमुहूर्त गवाना यथेष्ट नहीं समझा। इसलिए सीता जी द्वारा बनाए गए बालू के शिवलिंगों को उन्होंने स्वीकार कर लिया तथा सीता और राम ने उस ज्योतिर्लिंग को ज्येष्ठ शुक्ल दशमी, बुधवार को, जब चन्द्रमा हस्त–नक्षत्र में सूर्य वृष राशि में था, स्थापना की, जो कि रामेश्वरम् के नाम से प्रख्यात हुआ।

कुछ समय उपरांत जब हनुमान कैलाश से शिवलिंग सहित लौटे, तो वहां पहले से स्थापित शिवलिंग को देखकर नाराज हो गए। हनुमान की नाराजगी समाप्त करने के लिए राम ने पहले से स्थापित शिवलिंग के बगल में ही हनुमान जी द्वारा लाए गए शिवलिंग को भी स्थापित कर दिया तथा यह घोषणा भी की रामेश्वरम् की आराधना करने से पूर्व लोग हनुमान द्वारा लाए गए शिवलिंग, जिसका नाम काशी विश्वनाथ रखा गया था, की आराधना करेंगे। आज तक यह रिवाज चला आ रहा है कि श्रद्धालुगण रामेश्वरम् की आराधना से पूर्व काशी विश्वनाथ की ही आराधना करते हैं।

रामेश्वरम् से करीब दो किलोमीटर दूरी पर गंधमदन पर्वत अथवा पहाड़ी पर श्री रामचन्द्र जी के चरण बने हैं। यहां से रामेश्वरम् मंदिर और द्वीप का मनोहर दृष्य दिखाई देता है। यहां 'राम झरोखा' भी है। ऐसी मान्यता है कि श्रीराम ने इस झरोखे से झांककर समुद्र का अवलोकन किया और समुद्र विस्तार नापकर लंका आक्रमण की योजना बनाई थी। 'राम झरोखे' में अगस्त्य मुनि का आश्रम भी है। ऐसा माना जाता है कि लंका जाने से पूर्व दर्भघास पर श्रीराम ने विश्राम किया था। रामेश्वरम् के उत्तर पूर्व में 16 किलोमीटर की दूरी पर नौ ग्रहों वाला नव पाशनम मंदिर है। यह देवी परनम के नाम से भी जाना जाता है। रामेश्वरम् से करीब दो किलोमीटर की दूरी पर लक्ष्मण तीर्थ है। जहां श्रद्धालुगण स्नान करते हैं। लक्ष्मण तीर्थ में मुडन ओर श्राद्ध भी होता है। यहां पर लक्ष्मणेश्वर शिव मंदिर भी है। यहां से लौटते समय सीता तीर्थ मिलन है। यहां श्रीराम तथा पंचमुखी हनुमान की मूर्ति है। उससे कुछ आगे रामतीर्थ नामक बड़ा सरोवर है। इसका जल खारा है। इसी सरोवर के किनारे श्रीराम मंदिर दर्शनीय है।

रामेश्वरम् मंदिर में वर्ष भर उल्लास, उमंग तथा उत्सव का वातावरण रहता है। जनवरी–फरवरी में तैराकी पर्व की धूम रहती है। फरवरी–मार्च में महाशिवरात्रि के वजह भक्ति तथा उपासना का वातावरण रहता है। जुलाई–अगस्त का मास तिरुकल्याणम् अथवा प्रभु के विवाह की धूम से बीत जाता है। लाखों भक्त रामेश्वरम् आकर अग्नितीर्थम् में डुबकी लगाते हैं तथा अपने पूर्वजों की सुख–शांति और मुक्ति की कामना करते हैं।

समुद्र ने रामेश्वरम् घाट को मुख्य भूमि से विलग कर दिया है। मंडपम् तथा पमवन रेल स्टेशनों के बीच पमवन रेल पुल है। यह देश का सबसे बड़ा पुल है। जिसका निर्माण कार्य करीब 10 वर्ष में पूरा हुआ था। पुल के निर्माण के पश्चात् सड़क मार्ग से रामेश्वरम् की यात्रा सुगम हो गई है। मदुरै से रेल या बस द्वारा रामेश्वरम् सुगमता से पहुंचा जा सकता है। समुद्र के बीच रेलगाड़ी बड़ी मनोहारी लगती है। रामेश्वरम् का निकटम हवाई अड्डा मदुरै है जो रामेश्वरम् से करीब 173 किलोमीटर की दूरी पर है।

लेखक को भी अद्वितीय तीर्थ रामेश्वरम् के अवलोकन तथा सैर का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। रामेश्वरम् पर्यटन की यादें संजोकर रखने के लिए यहां से शंख, मनके और ताड़ के पत्तों से निर्मित विभिन्न आकर्षक वस्तुएं खरीदी जा सकती हैं जो कि रामनाथ स्वामी मंदिर के आसपास के बाजार में सरलता से मिल जाती हैं।

योग माया पराशक्ति सीता

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को सीता नवमी कहते हैं, क्योंकि इसी दिन सीता जी का प्राकट्य हुआ था । इस पर्व को जानकी नवमी भी कहते हैं।

शास्त्रों के अनुसार वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की नवमी को पुष्य नक्षत्र में जब राजा जनक संतान प्राप्ति की कामना से यज्ञ की भूमि तैयार करने के लिए हल से भूमि जोत रहे थे , उसी समय पृथ्वी से एक बालिका का प्राकट्य हुआ। जोती हुई भूमि को तथा हल् की नोक को भी सीता कहा जाता है, इसलिए बालिका का नाम सीता रखा गया।

इस दिन वैष्णो संप्रदाय के भक्त माता सीता के लिए व्रत रखते हैं और पूजन करते हैं । मान्यता है कि जो भी इस दिन राम सहित सीता का विधि विधान से व्रत पूजन करता है उसे पृथ्वी दान का फल, सोलह महान दनों का फल तथा सभी तीर्थो के दर्शन का फल अपने आप मिल जाता है।

उपनिषदों, वैदिक वांगमय में उनकी महिमा व अलौकिकता के उल्लेख में होने शक्ति स्वरुपा कहा गया है। ऋग्वेद में वह असुर संहारिणी व कल्याणकारिणी हैं। सीतोपनिषद् में वे मूल प्रकृति विष्णु सानिध्या हैं। रामतापनियोंपनिषद में वे आनंद दायनी, आदिशक्ति स्थिती, उत्पत्ति कारिणी हैं।

आर्ष ग्रंथों में सीता सर्व वेदमई , देवमई लोकमई तथा इच्छा क्रिया ज्ञान की संगमन है। तुलसीदास जी उन्हें सर्व क्लेश हरिणी उद्भव स्थिति संहारिका व राम बल्लभा कहा है। पदम पुराण उन्हें जगन्माता, अध्यात्म रामायण उन्हें एक मात्र सत्य, योग माया का साक्षात स्वरूप और महा रामायण की समस्त शक्तियों की स्त्रोत तथा मुक्ति दायिनी कह उनकी आराधना करता है।

रामतापनियोपनिषद में सीता को जगत की आनंदानी, सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार की अधिष्ठात्री कहा गया है । यद्यपि तुलसीदास जी ने सीता के कन्या तथा पत्नी रूपों को ही दर्शाया है। किंतु आदि कवि वाल्मीकि ने उनमें वात्सल्य व स्नेह को भी दर्शाया है।

निर्णय सिंधु के कल्पतरु ग्रंथानुसार फागुन कृष्ण पक्ष की अष्टमी में सीता प्राकट्य हुआ था, अतः दोनों ही तिथियां उन्हीं के लिए मान्य है। तुलसीदास ने बालकांड के प्रारंभिक श्लोक में सीता जी की ब्रह्मा की तीन क्रियाओं– उदभव स्थिति व संहार की संचालिका तथा आद्याशक्ति के रूप में उनकी वंदना की है–

उदमवीस्थिति संहारकारिणम,
सर्वश्रेयस्करी सीता नतोअहम रामबललभाम। *(अद्भुत रामायण)*

सीता स्वयं को पृथ्वी की पुत्री मानती थी और अनेकों बार अग्नि में प्रवेश करके साक्षात प्रकट हुई। इससे सिद्ध होता है कि वे योगाअग्नि साक्षात थी जिसे स्पर्श करते ही अग्नि शांत हो जाती थी।

सीतोपनिषद अथर्व वेद का ही एक भाग है। इस उपनिषद के अनुसार देवगढ़ तथा प्रजापति के मध्य हुए प्रश्न उत्तर में सीता को शाश्वत शक्ति व प्रकृति का स्वरूप बताया गया है। इसमें सीता शब्द का अर्थ अक्षर ब्रह्म की शक्ति के रूप में हुआ है। यह नाम साक्षात योग माया का है। सीता को प्रभु राम का सानिध्य प्राप्त है। इसलिए वे विश्वकल्याण कारक हैं। सीता क्रिया, इच्छा व ज्ञान तीनों शक्तियों का एकल रूप है। वे परमात्मा की क्रिया शक्ति रूप में भगवान श्री हरि के मुख् से नाद रूप में प्रकट हुई हैं। वे प्रणव यानी ओंकार की वाचक हैं, एवं उनका नाम ही प्रणवनाद ओमकार स्वरूप है। परा प्रकृति व महामाया भी वही है।

उपनिषद के अनुसार सीता शब्द का पहला अक्षर भी परम सत्य से प्रवाहित हुआ है और वाक की अधिष्ठात्री वागदेवी स्वयं है। उन्हीं से समस्त वेद प्रवाहित हुए है । सीतापति राम से समस्त ब्रह्मांड व सृष्टि उत्पन्न हुए हैं। जिन्हें ईश्वर शक्ति 'सीता ' धारण करती है।

सीता जी भूमात्मजा है, इसलिए सूर्य चंद्र एवं अग्नि का प्रकाश उनका नील स्वरूप हैं। चंद्रमा की किरणें अमृत दायिनी सीता का प्राणदायी व आरोग्यवर्धक प्रसाद है। वहीं हर औषधि की प्राणतत्व हैं। उपनिषद के अनुसार सूर्य की प्रचंड शक्ति द्वारा सीता ही काल निर्माण व ह्रास करती हैं। वे काल धात्री भी हैं। पदनाम महाविष्णु क्षीरसागर के स्वामी श्री मन्नारायण के वृक्षस्थल पर श्री वत्स के रूप में वे ही विद्यमान है।

कामधेनु और स्यंमतक मणि भी जानकी जी है। वेदपाठी अग्निहोत्री द्विजवर्ग के अनंत कर्मकांड, संस्कार पूजन हवन या तंत्र विधियां सभी की शक्ति सीता ही है। उपनिषदों में वर्णन किया गया है कि स्वर्ग की अप्सरायें उर्वशी, रंभा, मेनका आदि इनके सम्मुख नृत्य करती हैं और नारद वीणा वादन करते हैं। व अनेक ऋषि गण विभिन्न वाद्य बजाते हैं। सीता उपनिषद में लिखा है कि सीता कालातीत व काल से भी परे हैं, वे आदि शक्ति भगवती हैं। यह संसार उन्हीं की करूणा एवं अनुग्रह से चल रहा है।

रामकथा के स्थूल रूप में सीता नामक जिन देवी का उल्लेख आता है उसमें इसी आदिशक्ति के रहस्यों का विवेचन किया गया है। अतएव राम परात्पर ब्रह्म है तो भगवती सीता उनकी अहलदिनी शक्ति है।

देवी भागवत पुराण में भी उनके शक्ति स्वरूप का दर्शन मिलता है, जबकि तत्व संग्रह रामायण में वह महाशक्ति, आद्यशक्ति समन्विता रूप में दिखती हैं। संत एकनाथ कृत भावार्थ रामायण में वे प्रत्यक्ष रूप से दैत्य मूलकासुर का संहार करती हैं। आनंद रामायण में सीता जी के द्वारा अनेक असुरों का वध होता है। जबकि अद्भुत रामायण में वह सहस्त्रस्कंध रावण का वध करने के लिए रौद्र रूप धारण करती हैं तथा तांडव नृत्य आरंभ कर देती है जिससे महाकाल तक कांप उठते हैं।

तब श्री राम को स्वयं उनकी स्तुति जानकी सहस्त्रनाम द्वारा करनी पड़ती है जिससे वह शांत होती हैं। निसंदेह सीता ने अनेकों ऐसे कार्य किए जो स्वयं श्रीराम भी ना कर पाए। अतएव विभिन्न वांगमयों में उनके शक्ति स्वरूप व योगमाया शक्ति के अनजाने पक्ष से लोक मानस सदैव लाभान्वित व चमत्कृत रहेगा।

संदर्भ :
1. दैनिक ट्रिब्यून ऑनलाइन हॉट डॉट कॉम
2. अमर उजाला डॉट कॉम
3. नईदुनिया एंड वैलनेस डॉट कॉम
4. स्वामी मुकुंद आनंद की राम कथा।

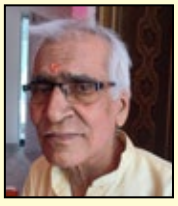

हनुमत् चरित्र

ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र
स्वतंत्र लेखन
बिहार

हनुमान तुम्हारे चरित राम, निज मुख गाई बारहिं बारा।
राम सुग्रीव मयत्री जोड़ी, गए सिय खोज सिंधु पारा,
लाँघे जलधी अपार, नगर लंका में हनुमत पगु धारा।
हनुमान तुम्हारे चरित राम, निज मुख गाई बारहिं बारा।

किन्हीं मित्रता विभीषण संग, माता चरनन में सिरु धारा,
दिन्हीं मुद्रिका धरापुत्री को, बिरह दुसह दुख हर डारा।
हनुमान तुम्हारे चरित राम, निज मुख गाई बारहिं बारा।

बाटिका उजारे अक्षय मारे, रावन मद को मथ डारा,
लंकापुरि किये दहन मारुतसुत, प्रभु चरनन में सिरु धारा।
हनुमान तुम्हारे चरित राम, निज मुख गाई बारहिं बारा।

जब शक्ती बाण लगे लक्ष्मण को, औषधि लेन गयो पारा,
लाये संजीवनि गिरि उपार, लक्ष्मण को जीवन दे डारा।
हनुमान तुम्हारे चरित राम, निज मुख गाई बारहिं बारा।

धरापुत्री = पृथ्वी की पुत्री सीता

कुछ अलग है पशुपतिनाथ ज्योतिर्लिंग

संतोष बंसल
स्वतंत्र लेखन,
पश्चिम विहार, दिल्ली

भारतीय संस्कृति में बारह ज्योतिर्लिंगों की बड़ी महत्ता है, जिनका भौगोलिक, पौराणिक और आध्यात्मिक आधार है। कभी – कभी आश्चर्य होता है यह देखकर कि जब सैलाब से केदारनाथ में सब कुछ विनष्ट हो गया, तब भी मंदिर बचा रहा। यही हैरानी तब भी हुई जब नेपाल में भी भूकंप से आस – पास की सभी इमारते नष्ट हो गयी थी, लेकिन पशुपतिनाथ मन्दिर कहीं से न हिला। क्या हम सोच सकते हैं आज से पांच – छः हजार वर्ष पूर्व हमारे ऋषि– मुनियों को हिमालय क्षेत्र पर ऐसे स्थानों की जानकारी थी, जिन पर प्रकृति की हलचल का कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ा। बिना किसी सूक्ष्म यंत्र के वे कैसे भौगोलिक अवधारणाएँ और खगोलीय गणनाएं कर सकने में सक्षम हुए ? चाहे वह ब्रह्माण्ड से सम्बंधित विज्ञान हो अथवा आर्यावृत के विशेष केंद्र बिंदुओं पर निर्मित ज्योतिर्लिंगों और शक्तिपीठों का ज्ञान। वे सूर्य, चन्द्रमा और तारों के साथ ग्रहों की स्थितिनुसार काल गणना में भी पारंगत थे और धरातल के प्रत्येक क्षेत्र का आकलन करने में भी सक्षम। इसी तरह अनादि शिव तथा शक्ति का अध्यात्म और सती देह के अवयवों की शक्तिपीठ में अवधारणा, यह मिथकीय और पौराणिक आख्यान आज भी शोध की मांग करता है। लेकिन इतना अवश्य है कि इन कथाओं और स्थानों ने भारतीय संस्कृति को एकजुट रखा और इनके माध्यम से सृष्टि के रहस्य को सरल और सरस् तरीके से स्पष्ट भी किया। अगर हम केदारनाथ और नेपाल के पशुपतिनाथ मंदिर को देखें इन से सम्बंधित मिथकीय कथाओं को एक सूत्र पारस्परिक जोड़ता है। जो महाभारतकालीन कुरुक्षेत्र के युद्ध की घटना से जुडी है एवं सुनने में अविश्वसनीय और

अतार्किक लगती है। फिर भी केदारनाथ धाम और पशुपतिनाथ मंदिर की अवधारणा को गुम्फित करती है कि कैसे पांडवों ने अपने अपराध और पापों के प्रायश्चित हेतु तपस्या के लिए हिमालय पर प्रस्थान किया ? इस के अतिरिक्त इन स्थलों को ही चुनने का वैज्ञानिक आधार क्या था ? यह अभी रहस्य ही बना हुआ है। जैसे उज्जैन के महाकाल मंदिर की भू – भर्गीय स्थिति मालूम हुई एवं अन्य ज्योतिर्लिंगों की भी भौगोलिक संरचना में भी कई खासियत मौजूद हैं। इसी तरह पशुपतिनाथ मंदिर में भी ऐसी कोई खास बात है, जो धरती की इतनी उथल – पुथल के बावजूद संरक्षित है और इसी के बलबूते प्रत्येक वर्ष यहाँ लाखों श्रद्धालुओं का तांता लगा रहता है।

चूँकि तीस वर्षों पूर्व मैं केदारनाथ धाम पर यात्रा कर चुकी थी और मेरे मन में पशुपतिनाथ मंदिर के दर्शन की लालसा बनी हुई थी। अतः इसी के मद्देनजर फरवरी 2022 में शिवरात्रि के अवसर पर हमारा नेपाल जाने का कार्यक्रम बना। काठमांडू के एयरपोर्ट पर उतरने के पश्चात हमें चारों तरफ पहाड़ों के बीच घाटी में पहुँचने का अहसास हुआ। ऊँचे –नीचे और टेढ़े –मेढ़े रास्तों से गुजरते हुए हम ने वहां हिन्दू और बौद्ध दोनों संस्कृतियों का प्रभाव देखा। अगर वहां का समाज कशीनों खेलने के लिए आधुनिक एवं उन्मुक्त है, तो धर्म और आस्था में बिलकुल पारंपरिक। लेकिन नेपाल अध्यात्म की भूमि हैं, जहाँ की राजधानी काठमांडू का प्राचीन पशुपतिनाथ मंदिर प्रमुख और प्रसिद्ध है। इसके नाम में पशु का मतलब सभी जीवों से है और पति का अर्थ स्वामी या मालिक है। इस प्रकार पशुपति जीवन के देवता का प्रतीक है तथा मंदिर विश्व सांस्कृतिक विरासत स्थल की सूची में सूची बद्ध है। यह काठमांडू से तीन किलोमीटर उत्तर पश्चिम में बागमती नदी के किनारे देवपाटन गाँव में स्थित शिव मंदिर है, जिसमे केवल हिन्दुओं और बौद्ध अनुयायिओं को प्रवेश की अनुमति है। नेपाल महात्मय पर आधारित स्थानीय किवदंती के अनुसार भगवन शिव एक बार वाराणसी के अन्य देवताओं को छोड़कर बागमती नदी के किनारे जंगल में चले गए थे। लेकिन भारत के उत्तराखंड के केदारनाथ की दंतकथाओं के अनुसार पांडवों को स्वर्ग प्रयाण के समय भैंसे के स्वरूप में शिव के दर्शन हुए। कहावत है कि पांडवों के अपने बांधवों अर्थात गोत्र वध के जघन्य काण्ड के लिए शिव उन्हें आसानी से मुक्ति नहीं देना चाहते थे, इसीलिए वे एक बैल का रूप धारण करके वहां से भागने लगे। इस भागा – दौड़ी के दौरान भीम ने उनकी पूंछ पकड़ी तो शरीर के दो टुकड़े हो गए, जो बाद में धरती में समा गए। उस स्थान पर स्थापित उनका स्वरूप केदारनाथ कहलाया एवं नेपाल के पशुपतिनाथ में उनका मस्तक गिरा। चूँकि मस्तिष्क ही सम्पूर्ण चेतना और क्रियाओं का केंद्र बिंदु है, अतः इस हिसाब से यह तमाम ज्योतिर्लिंगों में सब से खास और अहम् है। मनुष्य जीवन में चौरासी लाख योनियों की अवधारणा के रहते हिन्दुओं में यह मान्यता है कि यहाँ दर्शन के उपरान्त पशु योनि नहीं मिलती। यह भी प्रसिद्ध है कि चारों वेदों के बुनियादी सिद्धांत यहीं से निकले एवं वेद लिखे जाने से पहले ही यहाँ शिवलिंग स्थापित हो गया था।

काठमांडू से तीन किलोमीटर उत्तर – पश्चिम में बागमती नदी के किनारे देवपाटन गाँव में स्थित पशुपतिनाथ हिन्दू मंदिर कहलाता है। चूँकि मैं भारत में कई स्थानों के ज्योतिर्लिंगों पर जा चुकी थी और प्रत्येक की भौगोलिक और पौराणिक महत्ता से परिचित थी। अतः पशुपतिनाथ मंदिर का भूगोल भी जानने की इच्छुक थी कि इस स्थान की ऐसी कौन सी विशेषता है ? जिससे सम्पूर्ण जीव – जंतुओं के स्वामी शिव का मंदिर यहाँ प्रतिष्ठित किया गया। लेकिन इस मंदिर में बलि भी चढ़ाई जाती है, यह जानकार मन वितृष्णा से भर उठा। यह सवाल भी बार – बार मन में उठ रहा था कि इस स्थान के लोक जीवन में ये प्रथा कैसे जन्मी और उससे किसी का क्या लाभ है ? इसीलिए जब हम शिवरात्रि की भीड़ और सोमवार को मद्देनजर रखते हुए रविवार को एकादशी के दिन वहां पहुंचे तो बाहर सिर्फ पूजा सामग्री का बाजार लगा हुआ था। वहां से फूल – पत्र ले एवं अपनी चप्पलों को सुरक्षित रखकर हम पैदल ही मंदिर की ओर गए। काफी दूर तक रास्ते की ढलान से उतरते हुए एवं फिर संकरी गलियों के मोड़ों को पार कर हम एक खुले चौक में पहुंचे। मुख्य द्वार के बाहर ही अपनी जटाओं को लपेटे हुए साधुओं की टोली और चिलम फूंकते हुए सन्यासियों का दल बैठा नजर आया। उन में से एक के कपड़ों पर अबीर छिड़का हुआ था और पूरा चेहरा दाढ़ी के समेत लाल गुलाल से भरा था। मैंने सुना था कि हिमालय की कंदराओं और गुफाओं में निवास करने वाले साधू – सन्यासी, योगी – हठयोगी तथा अवधूत – बैरागी, फाल्गुन मास की शिवरात्रि पर यहाँ सभी एकत्रित होते हैं। भीतर पाँव रखते ही हम एक नयी दुनिया में पहुंच गए, जहां दीवार के साथ – साथ बनी चौड़ी पटरी पर असंख्य नागा साधू मौजूद थे। पंक्ति में बैठे इन नागाओं का पूरा शरीर सफेद भस्म से लिपटा हुआ था और देह एकदम निर्वस्त्र थी। जबकि चेहरा पूरा दाढ़ी से ढका और सर पर बालों की जटाजूट थी। पालथी मार कर बैठे हुए इन नागा – साधुओं को लोग 'दोंने' में खीर परोस रहे थे। सम्भवतः नागा साधू नग्नता या 'न्यूडिटी' जैसे अल्फाजों के लौकिक अर्थों से बेहद ऊपर उठे हुए रहते हैं, इसीलिए शर्म और लज्जा का कोई भाव इनमे नहीं था। न ही सर्द – गर्म मौसम का इनपर असर होता है, ये पूरे साल इसी तरह रहते हैं। चूँकि दो दिन बाद महाशिवरात्रि पर्व है, इसीलिए भारत से नागा साधू टोली बनाकर पशुपति नाथ

मंदिर में आये हुए थे।

भारतीय संस्कृति में यह एक ऐसा वर्ग है, जिनकी सनातन संस्कृति को बनाये रखने में अहम् भूमिका है। ये समाज से विलग ऐसा तबका है, जो कुम्भ के मेले के अतिरिक्त किन्ही खास पर्वो पर ही अपनी गुफाओं से बाहर आते हैं। चूँकि इस मंदिर का तंत्र – मन्त्र की दुनिया से गहरा नाता है अतः तांत्रिक लोग भी यहाँ पूजा करते– करवाते हैं। जो लोग मन्त्रों के प्रभाव को जानते हैं, उनकी गहरी रूचि और जिज्ञासा रहती है। यद्यपि मेरी भी इच्छा है इस रहस्यमयी दुनिया को जानने की, किन्तु यह नदी की तरह गहरा और चौड़ा पाट है। जिसके एक किनारे पर हम दुनियावी लोग जिन्दा हैं एवं दूसरे किनारे पर ये योगी– हठयोगी जीते हैं। खैर वहां से चार सीढिया नीचे उतर कर प्रांगण आया, जिसके बीचोंबीच केंद्र में पगोडा शैली की छत वाला मंदिर स्थित था। मंदिर के मुख्य द्वार के ऊपर स्वर्ण कलश युक्त शिखाएं विराजमान थी, जिनके ऊपर शिव पताका भी चमक रही थी। जिस आँगन में हम खड़े थे, वहीं चबूतरों पर बने छोटे –छोटे मंदिरों के शिखर पर ध्वज और उनके नीचे अनेक प्राचीन मूर्तियां सुशोभित थी। सामने शिव के वाहन नंदी की मूर्ति स्थापित थी, जो सोने की भाँति दीप्तिमान दिख रही थी। वह इतनी विशाल है कि सभी लोग उसके सामने बौने दिख रहे थे और बड़े नंदी के थोड़ा आगे एक छोटे नंदी भी विराजमान थे। शिवलिंग के पश्चिमी मुख की तरफ बने पीतल के इस विख्यात नंदी का निर्माण मंदिर के संस्थापकों की 20 वीं पीढ़ी के राजा धर्मदेव ने ही करवाया था। हम भी मुख्य मंदिर में दर्शन हेतु भक्तों की पंक्ति में शामिल हो गए जो बाहर बने छोटे –छोटे पूजा स्थलों के बीच से गुजर रही थी। ये अब अवशेष मात्र थे, लेकिन कभी इन पर भव्य कलाकृति रही होगी। भीड़ को देखकर यह अनुमान हो गया था कि पशुपति नाथ की महिमा लोक जीवन में न्यारी है। तभी हजारों भक्त अपनी अटूट आस्था, श्रद्धा और विश्वास के बल पर यहाँ बाबा के चरणों में माथा टेकने आएं हैं। किसी तरह हम नंदी के सन्मुख वाले द्वार तक पहुंचे, लेकिन कक्ष के भीतर का कुछ भी साफ नजर नहीं आ रहा था। केवल शिवलिंग की धूमिल सी छवि दिख रही थी, तभी बाहर खड़े पुजारी ने हमारे हाथ के दोने के फूल लेकर वहां ढेर में डाल दिए। हम प्रार्थना भी न कर पाए थे कि इतने में आगे बढ़ो, आगे बढ़ो का स्वर सुनाई दिया। हतप्रभ से उतरते हुए हमने देखा कि दाईं ओर वीर मुद्रा में महावीर हनुमान भी हैं।

वास्तव में नेपाल की सामान्य जनता और राजपरिवार के लिए पशुपतिनाथ ही उनके आराध्य देव हैं। इनकी मान्यता है कि यहाँ आज भी शिव का वास है एवं वे बाबा को सृष्टि के सृजन का आधार मानते हैं। इसीलिए शिव का पशुपति नाथ नाम संसार के सभी जीव – जंतुओं यानी तीनों लोकों में सम्पूर्ण प्राणी जगत के स्वामी के लिए विख्यात है। मंदिर के विषय में किवदंतियां हैं कि पशुपतिनाथ मंदिर का निर्माण सोम देव राजवंश के पशुप्रेक्ष ने तीसरी सदी ईसा पूर्व करवाया था। किन्तु उपलब्ध ऐतिहासिक दस्तावेज 13 वीं शताब्दी के हैं। मूल मंदिर कई बार नष्ट हुआ एवं वर्तमान स्वरूप नरेश भूपतेन्द्र मल्ल ने सन 1697 में प्रदान किया। इसी पशुपतिनाथ मंदिर में शिवलिंग कक्ष लम्बे – चौड़े आँगन के

मध्य स्थित है तथा मंदिर के अंदर – बाहर की दीवारों पर चांदी की परत चढ़ी हैं। जिन पर देवी – देवताओं की मूर्तियां गढ़ी हुई हैं और जिनमे कई मिथकीय कथाओं और पौराणिक गाथाओं के चित्र देखें जा सकते हैं। अब हम बाईं तरफ बने द्वार की तरफ बढ़े, जहाँ से बहुत से दर्शनार्थी भीतर जा रहे थे। हम भी उन्हीं के पीछे भीतर प्रवेश कर गए, जहाँ शिवलिंग के चारो तरफ 'रेलिंग' लगी थी। वहां पर पुजारी भक्तों के प्रसाद, पुष्प, रुद्राक्ष और चढ़ावे को शिवलिंग से स्पर्श करवाकर उन्हें चन्दन का टीका लगा रहे थे। यहाँ अगर हम मंदिर में सेवारत पुजारियों की बात करें तो उडुपि ब्राह्मण यानी केवल भट्ट ही गर्भ गृह में आ –जा सकते हैं और सेवा कर सकते हैं। यह जगत प्रसिद्ध है कि 15 वीं शताब्दी के राजा प्रताप मल्ल ने यह परम्परा शुरू की थी कि मंदिर में चार पुजारी दक्षिण भारत के 'उडुपि' नामक स्थान के ब्राह्मणों में से रखे जाते हैं। उडुपि दक्षिण भारत का वह तीर्थ है, जहाँ के ब्राह्मणों को राजा ने 'पंजा पत्र' जारी करके पशुपतिनाथ की देख – रेख सौंपी थी। इस 'पंजा पत्र' को किसी भी अदालत में चुनौती नहीं दी जा सकती और इस आदेश का संशोधन भी संभव नहीं है। जबकि नेपाली पंडित को भंडारी कहा जाता है, जो यहाँ सिर्फ पूजा करते हैं। प्रातः काल चार भंडारी पूजा – अर्चना करते हैं, जो नेपाली वंश परम्परा के होते हैं। इसीलिए चढ़ावें की नगदी तीन भागों में बंटती है, जिसका एक तिहाई भाग चारो भंडारियों को और शेष दो तिहाई दक्षिण भारत के पांच भट्टों को प्राप्त होता है। एवं सोना – चांदी एवं अन्य मूल्यवान भेंट मंदिर के कोष में जमा कर दी जाती हैं, ये सब बाते हमें स्थानीय मित्र से मालूम हुई।

यह भी पता लगा कि पशुपतिनाथ के दो प्रकोष्ठ हैं, जिसके निचले भाग में गर्भगृह है। ऊपर शिवलिंग के चारों दिशाओं में एक – एक मुख और एक मुख ऊपर की ओर दिखा। पंचमुखी लिंग के पाँचों मुख अलग – अलग गुणों के प्रतीक हैं और चार मुख चार दिशाओं में हैं। दक्षिण की ओर अघोर, पश्चिम की ओर सधोजात, पूर्व की ओर तत्पुरुष, उत्तर की ओर अर्धनारीश्वर है। ऊपरी दिशा या ईशान मुख पशुपतिनाथ का श्रेष्ठतम मुख है, जो लोक कल्याणकारी वरदाता शिवरूप है। प्रत्येक स्वरूप के दाएं हाथ में 16 माणिक की रुद्राक्ष की माला और बाएं हाथ में कमंडल

है। कक्ष के पश्चिमी मुख की तरफ पगौड़ा शैली की बड़ी छत के दोनों शार्दूलों के बीच में श्री राम, सीता, लक्ष्मण, हनुमान की छह काष्ठ मूर्तियां अंकित थी। उधर दक्षिण मुख की तरफ युधिष्ठर, द्रौपदी, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव की चार काष्ठ मूर्तियां हैं। यहीं द्वार के ठीक ऊपर पुरुष मुख के गरुड़ पर बैठे विष्णु की रजत मंडित प्रतिमा पर निगाह गई। इसी प्रकार पूर्व की ओर गंगा, यमुना, सरस्वती इन तीनों नदियों के साथ बलराम, महेश्वरी और विश्वकर्मा की काष्ठ प्रतिमाएं विद्यमान थी। चौथे एवं अंतिम उत्तर की ओर गणेश, शंकर, पार्वती, कुमार एवं ब्रह्मा, विष्णु के छह विग्रह थे। पशुपति लिंग के इसी मुख के सामने प्रांगण में शिव का विशाल त्रिशूल बना है, जिस पर डमरू और फरसा भी है। यहाँ ऐसे दो त्रिशूल हैं, जिन में एक पीतल का, दूसरा लोहे का है। वहीं कोने में कुछ सीढ़ियां चढ़कर 'वासु' (सर्प देवता) का मंदिर भी था, जिसकी मान्यता है कि पशुपति के दर्शन से पहले वासुकी के दर्शन करने चाहिए। वासुकी मंदिर के पीछे की ओर तांडव शिव मंदिर है, जिसके द्वार के ठीक सामने दीवार पर पार्वती की प्रतिमा और बीच में शिवलिंग स्थापित है। इसी के समीप कुछ सीढ़ियां उतर कर बागमती की तरफ के रास्ते पर शेषशायी विष्णु की लगभग एक मीटर लम्बी लेटी हुई प्रतिमा जमीन पर बनी है। पीछे की तरफ बागमती नदी बह रही है, जिसके दाएं तट पर ही आर्य घाट है। इसी घाट के पानी को मंदिर के भीतर ले जाने का प्रावधान है एवं यहीं पर शवों का दाह संस्कार किया जाता है। वहां विष्णु अवतार त्रिविक्रम की मूर्ति भी विद्यमान थी तथा सीढ़ियां चढ़ते ही गणेश मंदिर के दर्शन हुए। इस प्रकार हिन्दू संस्कृति के प्रमुख सभी देवी–देवताओं के मंदिर यहाँ विधमान हैं एवं यह हिन्दू धर्म के प्रमुख आठ स्थानों में से एक माना जाता है।

इसके अतिरिक्त बाईं ओर एक बड़े पेड़ के तने के साथ मुक्ति मंडल बना हुआ था, जहाँ भभूत मले जटाधारी साधू गण धूनी जला कर बैठे हुए थे। उसी के आगे बरामदे में संगमरमर की कृष्ण प्रतिमा के दर्शन हुए, जिनका अभी तक कोई विग्रह नहीं दिखा था। फिर भैरव, शीतला देवी और चौसंठ लिंगो का मंदिर था, जिसकी मान्यता है कि चौंसठ लिंगों के मंदिर की परिक्रमा करने से चौरासी लाख योनियों से मुक्ति मिलती है। दूसरे सम्पूर्ण नेपाल में शिवजी के चौसंठ मंदिर हैं, इसीलिए मंदिर का नाम चौंसठ लिंग पड़ा। आगे बाईं ओर चलने पर भजन मंडल है और दाईं तरफ यज्ञशाला। भजन मंडल के सामने ही चौक में शनि, शुक्र, राहु, केतु, मंगल, बुद्ध, बृहस्पति, चंद्र और सूर्य इत्यादि नौ ग्रह पत्थर के चौकों पर उकेरे गए हैं। अंत में मुख्य द्वार के भीतर से बाईं ओर सत्यनारायण मंदिर है, इस प्रकार पशुपतिनाथ को छोटे –बड़े मंदिर समूहों का महामंदिर कहा जा सकता है। यहाँ लोक जीवन में यह धारणा भी है कि यह शिवलिंग पारस पत्थर के समान है, जो लोहे को भी सोना बना सकता है।अगर हम इस अवधारणा का गूढ़ अर्थ समझे तो यह भी हो सकता है कि शिव विश्व गुरु हैं और उन के संसर्ग में मनुष्य क्या नहीं बन सकता? अगर हम कहें कि जैसे शिव को अमृत – विष, अच्छा – बुरा सब कुछ स्वीकार्य है, उसी तरह समाज में ऊंच – नीच, गरीब – अमीर को समान समझना ही लोक के लिए कल्याणकारी हो सकता है। मनुष्य ज्ञान प्राप्त करके साधारण जीवन में बदलाव करके, उसे कीमती धातु के समान बेहद मूल्यवान बना सकता है। सम्भवतः इसी स्थान पर शिव को विशेष ज्ञानार्जन हुआ, जिसके परिणाम स्वरूप वे सृष्टि के रहस्यों से परिचित हुए। वे यहाँ महाज्ञानी बने और संसार की बहुत सी गुत्थियों को सुलझा पाए। तदोपरांत उन्हों ने व्यक्ति, परिवार और समाज को संगठित किया तथा ग्रहों और नक्षत्रों की परिकल्पना के साथ काल गणना का प्रारूप दिया। यह शिव का मस्तिष्क ही है, जिसके विवेक से इस स्थल पर चारों वेदों के सृजन का सूत्रपात हुआ। दूसरे ये चारों चेहरे तंत्र विद्या के चार बुनियादी सिद्धांत हैं और चारों वेदों के बुनियादी सिद्धांत भी यहीं से निकले हैं। एक मान्यता यह है कि यहाँ शिव की मूर्ति धरती में आधी समाई हुए है और प्रत्येक वर्ष कुछ इंच ऊपर आ जाती है। माना जाता है कि जिस दिन यह प्रतिमा धरती पर पूरी तरह ऊपर आ जाएंगी, तब धरती पर प्रलय आएगी।

वस्तुतः जब मैंने पशुपतिनाथ की भूगोलीय स्थिति का आ. कलन किया तो यहाँ धरती का खास प्रारूप नजर आया, जैसे वह तलहटी में हो। एवं मंदिर में देवी – देवताओं की प्रतिमाओं के विषय में यही अनुमान लगाया कि ये सब बाद में स्थापित हुई होंगी। क्योंकि पाषाण प्रतिमाओं का कल्पित स्वरूप लगभग बारहवीं सदी में विकसित हुआ, जबकि इस से पूर्व मूर्तिकारों ने अपना कला कौशल गुफाओं की भित्तियों पर उकेरा था।अगर हम परमात्मा के आदि स्वरूप की बात करें, तो पहले केवल शिवालय ही बनता था। जो ज्योतिर्लिंग या शिवलिंग के निराकार रूप में परिकल्पित किया और उसका प्रतीकात्मक अर्थ भी अर्धनारीश्वर के रूप में ही निहित होता था। दूसरे शिव परिवार की पौराणिक गाथाओं और मिथकीय कथाओं के माध्यम से परिवार और समाज को सन्देश दिया गया कि सब जीव – जंतुओं में स्वभाव की विभिन्नता होते हुए भी वे अभिन्न है। एक – दूसरे को स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता देते हुए भी वे सभी आपस में प्रेम और सामंजस्य पूर्ण रहते हैं। इसी कारण समाज के सभी लोगों को शिव प्रिय हैं, चाहे वे ऊँचे तबके के हों या फिर हाशिये पर रहने वाले निचले वर्ग के। अथवा सुदूर जंगलों में रहने वाले आदिवासी हों, सब में देवों के देव महादेव ही मान्य हैं। उनका विग्रह कुदरत की तरह कल्याणकारी है। वास्तव में यही सनातन संस्कृति रही है, जिसमें शिवलिंग पर फल –फूल के साथ धतूरा, आक पात्र इत्यादि विषैले पदार्थों को भी पारिस्थितिकीय सं. रक्षण एवं पर्यावरण संतुलन के लिए महत्व दिया गया। अंततः हमारे ऋषि – मुनियों ने भूभर्गीय विशिष्टताओं के आधार पर ही ज्यो. तिर्लिंगों तथा शक्तिपीठों की स्थापना की, जिससे तीर्थाटन के साथ पर्यटन भी विकसित हो सके। सम्भवतः पशुपतिनाथ में शिवलिंग के पंच मुखों को जगत के पंच तत्वों के रूपक में प्रस्तुत किया गया हो । जिससे सम्पूर्ण प्राणी जगत के लिए आवश्यक इन पंच तत्वों का मनुष्य दोहन –विदोहन न करे और अपनी आगामी संस्कृति को विरासत सौंप सके। लेकिन हुआ इसका उल्टा, यह अब जग जाहिर है। उस सनातन संस्कृति को हिन्दू धर्म का नाम दे दिया गया और परम्पराओं के गूढ़ अर्थों को न समझते हुए उन्हें रूढ़ियों और कटटरता में तब्दील कर दिया गया। लेकिन पशुपतिनाथ अपने मूल अर्थ में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वामी है, जो बिना किसी भेदभाव के सम्पूर्ण जीव – जगत को प्रेम करते हैं।

स्थायी स्तम्भ

महत चिंतन श्रृंखला

विजय कुमार तिवारी
(कवि, लेखक, कहानीकार, उपन्यासकार, समीक्षक)
भुवनेश्वर, उडीसा

1. धर्म की ताकत और कमजोरी : धर्म हथियार क्यों बनते गये और लोगों ने इसका उपयोग अनुयायियों पर ही क्यों किया? क्या धर्म की बुनियाद कमजोर रही या लोगों ने धूर्तता दिखाई?धर्म अत्यन्त व्यक्तिगत,पवित्र,विश्वास के साथ मानने की चीज है। इसमें किसी के हस्तक्षेप की कोई सम्भावना नहीं है। हमारा अन्तःकरण ही जानता, पहचानता है कि हमारी धार्मिकता क्या है। इसकी दशा,दिशा स्वतः तय होती है जो हमारे जन्म–जन्म के संस्कारों से संचालित है।

मैं उन धर्मो की बात नहीं कर रहा जो लम्बे काल से रुढ़िगत हो एक आकार ले चुके हैं। आप इसे आन्तरिक धर्म और वाह्य धर्म के रुप में समझ सकते हैं या व्यक्तिगत धर्म और परिवार,समाज का धर्म भी कह सकते हैं। मैं एक धर्म के भीतर के धर्म की पड़ताल कर रहा हूँ।

बहुत लोग अपने जीवन में धर्म–परिवर्तन करते हैं क्योंकि उनकी आन्तरिक समझ धर्म के प्रति बदल चुकी होती है। वे परिवार या अपने कुनबे के धर्म के प्रति आस्थावान नहीं रह पाते। हालांकि आसानी से यह बदलाव घटित नहीं होता,लम्बा वाद–विवाद,तर्क–वितर्क और टकराव से गुजरना पड़ता है। प्रह्लाद ने पिता की बात नहीं मानी। आधुनिक समय में भीमराव अम्बेदकर ने अपना धर्म बदला।

इतिहास गवाह है कि इसके विपरीत,धर्म–परिवर्तन दूसरे तरीकों से करवाये गये हैं। अपने देश में आक्रान्ताओं ने जोर–जबरदस्ती या लोभ–लालच के बल पर बड़े स्तर पर धर्म–परिवर्तन करवाये। सभी के निशाने पर हिन्दू रहे। हर दौर में धर्म–परिवर्तन के कुछ मूलभूत कारण रहे। सत्ताशीन लोगों को अपना आधार मजबूत करना था,अपनी दिनचर्या, पूजा–पद्धति लागू करनी थी और बिना विरोध के शासन करना था। मुस्लिम आक्रान्ताओं और क्रिश्चियन व्यापारियों ने इसी तरह अपने धर्म का विस्तार किया। हमारे मन्दिरों को लूटा गया और ब्राह्मण पुजारियों की हत्यायें हुई। इन विदेशी आक्रमणकारियों ने सर्वाधिक चोट ब्राह्मणों पर की क्योंकि ब्राह्मण ही विचारों के सूत्रधार रहे हैं। समाज को दिशा देने का काम वे ही करते थे। समाज की उन्नतिशील व्यवस्था,राजधर्म की व्याख्या, सामान्य–जन की जीवन–नीति का

निर्धारण,देश की सीमाओं की सुरक्षा और सामाजिक कार्य–कलाप जैसे सभी विषयों में मार्ग–दर्शन उन्हीं से मिलता था। समाज को जोड़े रहने का गुरुतर दायित्व वे निभाते थे। सबसे बड़ी बात थी कि वे सत्ता में हिस्सेदारी नहीं चाहते थे। सभी जाति–वर्णो के कार्य निर्धारित थे। समाज में शान्ति और सन्तोष था। इस व्यवस्था को धूर्तता से,प्रलोभन से और भीतरी असन्तुष्टों की मदद से छिन्न–भिन्न कर दिया गया।

हिन्दुओं की उदारता ही उनकी सबसे बड़ी कमजोरी रही। हिन्दू आज भी सर्वाधिक उदार और सहनशील हैं। भले ही यह महत्वपूर्ण गुण है परन्तु आत्मरक्षा के लिए खड़ा होना कोई गलत बात नहीं है। उदारता को लोगों ने हमारी कमजोरी माना और इसका लाभ उठाया। पृथ्वीराज चौहान ने 18 बार मुहम्मद गोरी को अपनी उदारता के चलते छोड़ा। फिर हमारे जयचन्दों ने खूब गद्दारी निभाई। आज भी हम सर्वाधिक भीतर के गद्दारों से त्रस्त हैं। समाज और राष्ट्र के प्रति इनकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। इनका कोई धर्म नहीं है। उदारता से जब भी हमने किसी बाहरी को प्रश्रय दिया,वही हमारा शासक बन बैठा।

एक बड़ी गलती हम आज भी कर रहे हैं और सदियों से करते आये हैं। हमने अपने ईश्वर को सही ढंग से समझा नहीं। हमारे देवी–देवता,हमारे सन्त–महात्मा,हमारे गुरु और हमारा ईश्वर,सभी का सहयोग कैसे मिलता है,यह हमने समझा ही नहीं। हमने मन्दिर बनाया और अपने आराध्य की मूर्ति लगा दी। हम नित्य पूजा–पाठ में लगे रहते हैं और अपनी सारी जिम्मेदारी उस भगवान को सौंपकर निश्चिन्त हो जाते हैं। हम उतना ही कार्य करते हैं जिसके बिना हमारा जीवन नहीं चल सकता। आसन्न खतरों के लिये श्रद्धापूर्वक हम ईश्वर पर निर्भर हो जाते हैं। ऐसा कभी नहीं होगा कि हमारा ईश्वर आकर हमारे लिए तलवार उठायेगा। तलवार हमें ही उठाना होगा और हमें ही अपने लिए उठ खड़ा होना होगा।

अक्सर आपने लोगों को ईश्वर की उलाहना करते देखा होगा, 'हमने इतनी पूजा की, इतना मन्दिर गये, इतना दान किया, व्रत उपवास किया।' कुछ लोग तो ईश्वर के अस्तित्व को ही नकार देते हैं।

समझ लीजिए, 'ईश्वर हमेशा हमारे जीवन में है, हम माने या न माने।' अधिकांश लोग ईश्वर को भय या किसी स्वार्थपूर्ति के लिए स्वीकार करते हैं। जितना बड़ा स्वार्थ उतनी ही बड़ी पूजा। इससे कोई लाभ होनेवाला नहीं है।

ईश्वर की क्रिया शुरु होती है तो निश्चित ही हमारी चेतना जाग उठती है और भीतर के सारे गुण सक्रिय हो जाते हैं। वस्तु–. स्थिति स्पष्ट होती है। ईश्वर हमें ज्ञान देता है कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। ईश्वर हमें साहस प्रदान करता है और कार्य पूरा हो,इसके लिए सभी आवश्यक संयोग जुटा देता है। ईश्वर यह सुनिश्चित भी करता है कि हम सफल हों। यदि हम अपने भीतर स्थित परमात्मा की आवाज को सुन सकें तो वह हर समय हमें सचेत करता रहता है। क्या यह हमारे धर्म की महानता नहीं है?

शायद हम ईश्वर के साथ दूसरों से भी उम्मीद करते हैं कि वह हमें बचायेगा। कभी – कभी हम उससे भी उम्मीद करते हैं जो हमारा विनाश करने आया है। हिन्दू बँटा हुआ है–जाति में, मान्यताओं में, आस्था में, ऊँच–नीच में, अगड़ा–पिछड़ा में। वह एक नहीं होता। इसलिए शीघ्र परास्त हो जाता है। हमारी एक बड़ी दुविधा यह भी है कि हम सभी को उतना दुश्मन नहीं समझते जितना दूसरे हमें मानते हैं। यह भी सत्य है कि जब वह जाग जाता है तो कोई भी मुकाबला नहीं कर सकता। अब समय आ गया है, हमें अपनी रक्षा करनी ही चाहिए। एक होकर ही मुकाबला कर सकते हैं। भीतर के गद्दारों को पहचान कर उन्हें मौका मत दो। आज ये गद्दार जीवन के हर क्षेत्र में घुसे हुए हैं,उन्हें निकाल फेंकना है। यह हमारी लड़ाई है और हमें ही लड़ना होगा। मुफ्तखोरी छोड़ना होगा।

2. हमारा जीवन और ऋण की अवधारणा : हम सभी 'कर्म के सिद्धान्त' को जानते हैं और मानते हैं कि हमारे कर्म ही हमें सुखी या दुखी करते हैं। मैं इसमें कुछ जोड़ना चाहता हूँ और वह है– 'ऋण की अवधारणा।' हमें अपने कर्मो के फल भोगने पड़ते हैं। गहराई से देखिये, आत्मायें ही शरीर धारण करके एक–दूसरे से कर्म–व्यवहार करती हैं।

परमात्मा की व्यवस्था ऐसी है, ज्योंही हमने किसी के प्रति कोई कर्म किया तो उसका प्रतिफल सुनिश्चित हो गया और उसकी समयावधि भी। अच्छे और बुरे कर्मो के फल अच्छे व बुरे के रूप में ही मिलते हैं। महत्वपूर्ण और विचारणीय है कि उसी शरीरधारी आत्मा से मिलता है जिसके प्रति किया गया है। कर्म–व्यवहार को लेन–देन के रुप में समझना ज्यादा सरल है। एक ने ज्यादा स्नेह किया और दूसरी ने कम तो दूसरी आत्मा पर ऋण रह गया जिसे वापस करने के लिए दोनों आत्मायें भविष्य में मिलेंगी और अपना लेन–देन चुकता करेंगी।

कभी उस संयोग की कल्पना कीजिये जब पहली बार, ईश्वर की व्यवस्था में एक आत्मा, दूसरी आत्मा से मिली होगी। दोनों आत्मायें शरीर धारण करके एक–दूसरे के सम्पर्क में आयीं होंगी। शरीर धारण करते ही आत्मायें सक्रिय हो उठती हैं और अपनी भावनाओं के अनुसार व्यवहार करती हैं। शुरु–शुरु में सामान्य व्यवहार होते हैं जो एक–दूसरे को बहुत कम प्रभावित करते हैं। धीरे–धीरे हमारे जीवन में हलचल शुरु होती है तथा हमारा बहु. आयामी व्यवहार आसपास के लोगों को, प्रकृति को, जीव–जन्तुओं को प्रभावित करने लगता है और हमारा भीतरी उद्वेग आक्रामकता ले आता है। तब हमारे सामान्य सम्बन्ध जटिल होने लगते हैं। कभी हम अच्छा व्यवहार करते हैं और कभी बुरा व्यवहार करते हैं। हमारे भीतर के गुण–दुर्गुण पूरी तरह हमें संचालित करते रहते हैं और लेन–देन के रूप में किया हुआ हमारा व्यवहार ऋणी बनाता है। ईश्वरीय व्यवस्था में उसी ऋण–पूर्ति के लिए हम बार–बार जन्म लेते हैं और उन सभी आत्माओं से मिलते हैं जिनका ऋण चुकाना होता है।

क्रमशः

01 मई पर विशेष

श्रमिक दिवस

श्रम से जीवन का रंग बदलते देखा है

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
उत्तर प्रदेश

बिन श्रम के मिले सफलता, हम गलत संगत अपनाते हैं।
ऐसी सफलता से पहले हो खुशियाँ, बाद में पछताते हैं।।

सच में श्रम से खुलता है, सफलता का द्वार,
हमें जीवन में खुशियाँ, मिलती हैं अपरंपार।
हम श्रम करते नहीं, भाग्य को कोसते रहते,
श्रम बिन सफलता, पास आने से करे इंकार।

धन दौलत के लिए लोग, असद पथ पर बढ़ जाते हैं।
पद व शोहरत के लिए, किसी हद तक गिर जाते हैं।।

भाग्य के भरोसे रह, हम न तजें श्रम करना,
श्रम के मृदु स्वाद का, सच! में क्या कहना।
असंभव को संभव बनाता, हमारा परिश्रम
बिन श्रम के कष्ट मिले, हमें पड़ता है सहना।

भौतिकता की चमक में, हम आसानी से भटक जाते हैं।
कुपथ के चक्रव्यूह से, फिर हम कभी न निकल पाते हैं।।

श्रम के बल पर, रंक से नृप होते देखा है,
आलस होने पर, नृप से रंक होते देखा है।
जीवन में परिश्रम का, कोई विकल्प नहीं,
श्रम से जीवन का, यूँ रंग बदलते देखा है।

जब हम झूठ के, मायावी मकड़जाल में फंस जाते हैं।।
तब सत्पथ की शिक्षा देने वाले, हमें नहीं सुहाते हैं।।

दृढ़ संकल्प व कड़ा श्रम, हम करते जाएँ,
पथ में अवरोध मिले, कदापि न घबराएँ।
साहस दिखलाएँ व धैर्य रखें, अंतर्मन में,
सफलता की सीढ़ियां, हम यूँ चढ़ते जाएं।

श्रम के बल पर हम अपने जीवन में, जो कुछ कमाते हैं।
उसी में हमें सुकून मिले, इक सुखमय संसार बसाते हैं।।

30 मई पर विशेष

भगीरथ की तपस्या का फल धरती को मिला पावन गंगा जल

सुश्री इंदु सिंह 'इंदु श्री'
उपसम्पादक (अध्यात्म संदेश)
स्वतंत्र लेखिका व विचारक
नरसिंहपुर (मध्य प्रदेश)

हमको तो सर्वत्र गंगा जल सहजता से उपलब्ध दिखाई देता तो हमको यह याद नहीं रहता कि, कभी यह इस धरा के लिये दुर्लभ था और इसे यहां तक लाने के लिए कई महाऋषियों ने प्रयत्न किए सालों की तपस्या व कठोर साधना से हमको स्वर्ग में बहने वाली इस पावन नदी का जल प्राप्त हुआ आज गंगा दशहरा पर अवतरण की उस कथा का स्मरण करना आवश्यक जो बताती कि, किसी भी लक्ष्य को पाना असंभव नहीं बस, संकल्पशक्ति व दृढ़ता होना जरूरी है जैसे कि भगीरथ जी में थी तो आज वही कहानी दोहराते है।

अयोध्यापुरी में राजा सगर अपनी दो पत्नियों केशिनी व सुमति के साथ रहते हुए नगरी पर राज करते थे परन्तु, सन्तान न होने स्व दुःखी थे तब उन्होंने अपनी पत्नियों सहित तपस्या करने का निश्चय किया और उनके कठोर तप से महर्षि भृगु ने उनकी दोनों रानियों को आशीर्वाद दिया जिससे केशिनी को एक पुत्र असमंजस तो सुमति को साठ हजार पुत्रों की प्राप्ति हुई और लम्बे समय बाद उन्होंने अश्वमेघ यज्ञ कराने का निश्चय किया व अपने पौत्र असमंजस के पुत्र अंशुमान को, सेना लेकर अश्व के साथ परिक्रमा करने भेज दिया यज्ञ को निर्विघ्न सम्पन्न होता देखकर इंद्र को चिंता होने लगी और उन्होंने चालाकी से उसे चुराकर कपिल मुनि के आश्रम में बांध दिया जब यज्ञ के घोड़े के चोरी होने की सूचना राजा तक पहुंची तो उन्होंने अपने साठ हजार पुत्रों को उसकी खोज करने भेजा जो मुनि के आश्रम में मिला तो उन्हें ही उसे चुराने का दोषी समझ वे मुनि को दोष देने लगे जिसे सुनकर तपस्यारत कपिल मुनि ने आंखें खोली तो उनके तेज से सभी पुत्र भस्म होकर राख बन गए जब उन्हें खोजते हुए अंशुमान वहां पहुंचा तो सब हाल विदित हुआ जिसे सुनाकर गरूड़ ने उनकी मुक्ति का उपाय गंगा जल से उनका तर्पण करना बताया जो उस समय तक स्वर्ग में ही बहती थी ।

इस तरह गंगा मैया के धरती पर आने की भूमिका बंधी जिसके लिए पहले राजा सगर ने प्रयत्न किए तत्पश्चात उनके पौत्र अंशुमान और फिर उनके पुत्र दिलीप ने भी अपने पूर्वजों का उद्धार करने के लिये समस्त प्रयास किये पर, किसी को भी सफलता नहीं मिली और राजा दिलीप के बाद यह दायित्व उनके पुत्र भगीरथ पर आया तो उन्होंने दृढ़ संकल्प लिया कि, वह यह असम्भव कार्य कर अपने पितरों को मुक्त करेंगे और कठोर तपस्या का मार्ग चुना जिससे सृष्टि रचयिता ब्रम्हा जी ने प्रसन्न होकर उनसे कहा कि, गंगा को धरती पर भेजना आसान

नही उनके वेग को सहन करने के लिए यदि आदिदेव भोलेनाथ तैयार हो तो यह असाध्य लक्ष्य साध्य हो सकता है तो उन्होंने फिर एक पैर के अंगूठे पर खड़े होकर शिवजी को अपनी तपस्या से प्रसन्न कर गंगा जी को अपनी जटाओं में धारण करने के लिए मनाया तो उन्होंने वरदान देकर यह स्वीकार किया कि, गंगा के स्वर्ग से निकलने पर अपनी जटाओं के बीच में से उनको धरती पर जाने के लिए मार्ग देंगे क्योंकि, यदि ऐसा नहीं किया जाता तो गंगा के स्वर्ग से निकलकर सीधे पाताललोक में जाने की आशंका थी ।

आज ही वह पुनीत दिवस जब गंगा स्वर्ग से निकलकर भगवान शिव की जटाओं में समाई और शिव की स्तुति करने पर वहां से जटाशंकरी बनकर धरती पर आई पर, अभी भी कुछ अड़चन शेष थी तो वे उस जगह पहुंच गई जहां ऋषि जह्नु यज्ञ कर रहे थे तो उनकी यज्ञ सामग्री वे बहाकर ले गई यह देख ऋषि ने उनका सारा जल रोक लिया और भगीरथ के प्रार्थना करने पर अपने कान से उसे जाने का रास्ता दिया तो अब वे जाह्नवी बन गयी ऋषि जह्नु की पुत्री और अंततः उस स्थान पर भी उनकी पवित्र जलधारा पड़ी जहां राजा सगर के पुत्र राख रूप में बिखरे हुए थे वह गंगा जल के स्पर्श से मुक्त होकर स्वर्ग चले गए और स्वर्ग की गंगा धरती पर आ गयी और यही एकमात्र नदी जो स्वर्ग, धरती और पाताल तक प्रवाहित होती है, जिसकी वजह से इसे त्रिपथगा भी कहते है और इन्हें यहां तक लाने वाले सत्पुरुष भगीरथ के कारण भगीरथी भी कहलाती है और अपने पतितपावन जल से सभी के पापों का नाश करती है पर, हम उनका ही नाश करने में लगे यह भूल गए कि, जिस दिन इस धरती से उनका नामो–निशान मिट जाएगा उस दिन यह सृष्टि भी समाप्त हो जायेगी कलयुग का समापन हो जाएगा और अब किसी में इतना सामर्थ्य व संयम नहीं जो उनके लिये तपस्या कर सके तो भगीरथ की तपस्या से जो अनुपम उपहार मिला हम सब उसकी ही रक्षा करें वही हमारे लिए जीवनदायिनी है ।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन की मासिक ई–पत्रिका

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?

क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज – कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनांए आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 मई 2023

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह ई पत्रिका पूर्णतः निः शुल्क है। अपनी रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

निर्जला एकादशी

31 मई पर विशेष

भावना दामले
स्वतंत्र लेखन
इंदौर (मध्य प्रदेश)

भारत धार्मिक आस्था तथा विश्वास रखने वाला देश है। अधिकांश जनता धर्म में अगाथ श्रद्धा तथा निष्ठा रखनेवाली हैं। पूरे वर्षभर में विभिन्न प्रकार के व्रत, नियम, उपवास तथा पूजापाठ में व्यस्त रहने वाली है। एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ये सभी व्रत नियम तथा उपवास पूर्ण रूप से प्रकृति तथा मौसम के अनुकूल और विज्ञान सम्मत हैं। चौत्र मास से लेकर फाल्गुन मास तक की सभी एकादशियों का महत्त्व है।

ज्येष्ठ माह के शुक्ल पक्ष की एकादशी को निर्जला एकादशी कहा जाता हैं। निर्जला का अर्थ निर्जल अर्थात बिना जल के तथा निराहार रहकर व्रत करना। इसके करने से हर प्रकार की मनोरथ सिद्धी होती हैं। सभी प्रकार के पापों से मुक्ति मिलती हैं। जीवन में समृद्धि आती हैं। ऐसा कहा जाता है कि, जो एकादशी की रात्रि में श्रीहरि के समीप भक्तिपूर्वक जागरण करता है, उसके शरीर में देवता आकर स्थित होते हैं। जिन्होंने श्रीहरि के समीप जागरण किया, उन्हें देवताओं के पूजन का, यज्ञों के अनुष्ठानों का तथा सब तीर्थों में स्नान का फल मिलता हैं।

श्रीकृष्ण से बढ़कर कोई देवता नहीं हैं और एकादशी के व्रत के समान दूसरा कोई व्रत नहीं है। भगवान विष्णु के लिए जहाँ जागरण किया जाता है और जहाँ शालिग्राम शिला स्थित होती हैं, वहाँ साक्षात भगवान विष्णु उपस्थित होते हैं। निर्जला एकादशी के व्रत में सूर्योदय से लेकर अगले दिन द्वादशी के सूर्योदय तक जल तथा भोजन ग्रहण नहीं करते हैं। इस दिन सूर्योदय से पहले उठकर घर तथा मंदिर की सफाई करते हैं। उसके बाद स्नान कर पीला वस्त्र धारण कर मंदिर या पूजा स्थल पर जाकर आसन पर बैठकर व्रत पूजन का संकल्प लेते हैं स भगवान विष्णु के पास गाय के घी का दीपक लगाते हैं स भगवान का चन्दन, गंध,

अक्षत तथा पीले फूलों से श्रद्धा भक्ति पूर्वक पूजन करते हैं। पीले रंग की मिठाई अर्पित करते हैं। 'ओम नमो भगवते वासुदेवाय' मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए। विष्णु सहस्त्रनाम का भी जाप करना चाहिए। जाप करने के बाद आम के शर्बत का भोग भगवान विष्णु को लगाना चाहिए फिर प्रसाद स्वरूप उसे लोगों में बाँटना चाहिए। ऐसा करने से मन की इच्छा पूर्ण होगी और पारिवारिक क्लेश दूर होंगे।

द्वादशी को विष्णु भगवान का गंध, धूप, पुष्प और सुन्दर वस्त्र से विधिपूर्वक पूजन करके जल के घड़े का दान का संकल्प करना चाहिए स इस मंत्र का उच्चारण करना चाहिए –

देवदेव हृषिकेश संसारार्णवतारक।
उदकुम्भप्रदानेन नय मां परमां गतिम।।

अर्थात संसार सागर से तारने वाले हे देवदेव हृषिकेश! इस जल के का दान करने से आप मुझे परम गति की प्राप्ति कराये। (पद्म पु. उ. खंड : 53. 60) ऐसा करने से संपूर्ण तीर्थों में स्नान तथा दान आदि का पुण्य मिलता है।

वर्षभर में जितनी एकादशियाँ होती हैं, उन सबका फल निर्जला एकादशी के व्रत पालन से मनुष्य प्राप्त कर लेता हैं। इसमें जरा भी संदेह नही है। शंख, चक्र तथा गदा धारण करने वाले भगवान केशव कहते हैं कि यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और एकादशी को निराहार रहे तो वह सब पापों से मुक्त हो जाता है। एकादशी का व्रत करने वाले मनुष्य के पास विशालकाय, विकराल आकृति और काले रंग वाले दण्ड – पाश धारी भयंकर यमदूत नहीं आते। अन्तकाल में पीतांबर धारी, सौम्य स्वभाव वाले, हाथ में सुदर्शन धारण करने वाले और मन के समान वेग शाली विष्णु दूत इस वैष्णव को भगवान विष्णु के धाम में ले जाते हैं। अतः निर्जला एकादशी का व्रत उपवास और श्रीहरि का पूजन अवश्य करना चाहिए। स्त्री हो या पुरुष, यदि उसने बहुत बड़ा पाप भी किया हो तो वह सब इस एकादशी के प्रभाव से भस्म हो जाता हैं। जो मनुष्य उस दिन जल के नियम का पालन करता है वह पुण्य का भागी होता है। उसे स्वर्ण मुद्रा दान करने का फल प्राप्त होता सुना गया है। मनुष्य निर्जला एकादशी के दिन स्नान, दान, जप, होम आदि जो कुछ भी करता है, वह सब अक्षय होता है। यह भगवान श्रीकृष्ण का कथन है स इस व्रत से मानव वैष्णव पद को प्राप्त कर लेता है।

जो इस प्रकार से पूर्ण रूप से पापनाशिनी एकादशी का व्रत करता है, वह सब पापों से मुक्त होकर अनामय पद को प्राप्त होता है। इस संबंध में महाभारत काल का एक प्रसंग प्रसिद्ध है। पाण्डु पुत्र भीम ने एक बार वेदव्यास जी से कहा कि राजा युधिष्ठिर, माता कुन्ती, द्रोपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव ये सभी एकादशी का व्रत करते हैं। मुझे भी व्रत करने के लिए कहते हैं। मैं उनसे कहता हूँ कि मुझसे भूख सही नही जायेगी। भीमसेन की बात सुनकर व्यासजी ने कहा कि यदि तुम्हें स्वर्गलोक की प्राप्ति अभीष्ट है और नर्क को दूषित समझते हो तो दोनों पक्षों की एकादशियों को भोजन न करना।

भीम ने कहा कि एक बार भोजन करके भी मुझसे व्रत नही किया जा सकता है फिर उपवास करके कैसे रह सकता हूँ? मेरे उदर में वृक नामक अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है जब मैं अधिक खाता हूँ तब ही यह शांत होती है। इसलिए मैं वर्षभर में केवल एक ही उपवास कर सकता हूँ। इसलिए जिससे स्वर्ग की प्राप्ति सुलभ हो तथा उसको करने से मेरा कल्याण होगा। ऐसा कोई एक व्रत अवश्य बताइए। मैं उसका यथोचित रूप से पालन करूँगा। महर्षि व्यास जी ने भीमसेन को निर्जला एकादशी व्रत का महत्व बताया और करने को कहा। महर्षि व्यास जी की आज्ञा से भीम ने बड़ी हिम्मत से यह व्रत आरम्भ किया। कहा जाता है कि सुबह होते होते वे मूर्च्छित हो गये। तब उनके चारों भाइयों ने उन्हें गंगाजल और तुलसी का चरणामृत पिलाकर मूर्छा से बाहर निकाला स कहते हैं कि ऐसा करने से भीम पाप मुक्त हो गये स इसलिये इसे भीमसेनी एकादशी भी कहते हैं।

आओ खुद को चुनो

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

कोई और चुने न चुने, आओ खुद को चुनो
पवन के पंख पे खूशबू उड़ के आई है चलो।

कुछ काम बिखरेंगे तो कुछ बनेंगे भी जरूर
श्रम की सलाई पर आओ कर्म के धागे बुनो।

अंधेरे को चीरकर ही हर सवेरा आता है
सितारा हो इस फलक के, मन ही मन गुनो।

मिलेंगे कुछ फूल प्रशंसा के, कुछ आलोचना के भी
राह से मगर कांटों को चुनने का साहस रखो।

उगके ढ़लना ढ़लके उगना सूरज सिखलाता है हमें
यही जिंदगी की सीख है, अपने आज में खुश रहो।

कोई और चुने न चुने, आओ खुद को चुनो
पवन के पंख पे खूशबू उड़ के आई है चलो।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

सक्षमता का वास्तविक स्वरूप : परिणाममूलक कार्यप्रणाली

निष्पादन मूल्यांकन से गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

व्यावहारिक निपुणता : वैश्विक परिवेश के अन्तर्गत् गुणात्मकता के संदर्भ में व्यक्तिगत् और व्यावहारिक जगत् की सक्षमता का निर्धारण करना चुनौतीपूर्ण कार्य बन गया है। आज विभिन्न विरोधाभासी स्थितियों के मध्य यह घोषित करना कि 'वह व्यक्ति अथवा व्यवस्था सम्पूर्ण रूप से सक्षम है, जो किसी भी परिस्थिति का सामना कर सकता है', इस प्रकार का कथन प्रायः विवाद की स्थिति उत्पन्न कर दिया करता है। जीवन के विविध पक्षों को समझते हुए सक्षमता के वास्तविक स्वरूप का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि संतुष्टता एवं महत्वाकाँक्षा की प्राप्ति से जुड़ी स्थितियाँ किसी न किसी प्रकार से व्यक्ति के लिए सक्षमता का कारण हुआ करती हैं। इस भौतिकवादी युग में धन के साथ बल, बुद्धि एवं विवेक की अभिवृद्धि हेतु अलग–अलग विधियों से प्रयास किये जाते हैं जिससे सामाजिक परिदृश्य के भीतर सक्षमता से प्रविष्ठ हुआ जा सके। सामान्य दृष्टिकोंण को ध्यान में रखते हुए जब सक्षमता की व्याख्या होती है तब आम जनमानस के अन्तःकरण का अध्ययन करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि जीवन के प्रवाह हेतु उसकी निष्ठा परिवर्तित नहीं होती, लेकिन अनायास उत्पन्न हुए अवरोध से वह क्षणिक विचलित अवश्य होता है और स्वयं की अक्षमता को दोषारोपण की शैली में कोसने लगता है। कर्त्तव्यबोध की अनुभूति को पुरूषार्थ के संदर्भ में परिभाषित करने पर यह परिलक्षित होता है कि व्यक्ति जब समष्टि के परिदृश्य में अपना योगदान निरूपित करता है तब वह स्वयं को सक्षम समझने की स्थिति में होता है। यदि जीवन का मूल्याँकन प्राप्ति को आधार बनाकर किया जाता है तब संभवतः एकाँगी परिवेश का आँकलन ही पूर्ण हो सकता है लेकिन व्यक्ति के द्वारा क्या कुछ प्रदान किया गया है इसके प्रति जीवन की अवधारणा स्वयं को कितना महत्व देती है यह उसकी व्यापक मनःस्थिति पर निर्भर करता है। सक्षमता के सम्बन्ध में एक उद्यमी की भूमिका अपने उद्यम के लिए क्या हो सकती है यह उसकी उद्यमशीलता पर निर्भर करता है क्योंकि यहीं उद्यमीय प्रवृत्ति व्यक्ति के अन्तर्मन में सृजनात्मकता एवं नवाचार के बीजारोपण को फलीभूत करती है। विश्व के इतिहास में स्वयं को सामर्थ्यवान बनाने के साथ–साथ सामाजिक पृष्ठभूमि के अन्तर्गत् सक्षमता की वास्तविक स्थिति का निर्माण करने हेतु जिन उद्यमियों ने अपनी संपूर्ण शक्तियों का विनियोजन कर दिया है, जिसके परिणामस्वरूप आज उनकी उपलब्धियाँ आमजन के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गई हैं। सामाजिक उत्थान की गतिशीलता जब कल्याणकारी अर्थों में अपनी उपस्थिति दर्ज करते हुए सक्षमता के वास्तविक स्वरूप को व्यावहारिक धरातल पर लाने की कोशिश करती हैं तब विकास के विविध आयाम सम्पूर्ण गुणात्मकता के प्रति आशान्वित होने लगते हैं। विकास की प्रक्रिया विभिन्न क्षेत्रों में अपने परिणाममूलक योगदान का सूक्ष्म विश्लेषण और परिमार्जन करते हुए व्यावहारिक पूर्णता की ओर प्रस्थान करना चाहती हैं जिससे सक्षमता का वास्तविक स्वरूप समाज के सम्मुख प्रकट हो सके। जीवन में व्यावहारिक निपुणता की स्थितियों को निर्मित करने के लिए प्रभावशाली कार्यपद्धति एवं विधिवत् परीक्षण की तकनीक द्वारा नियोजित व्यवस्था के साथ गुणात्मक पुरूषार्थ करने की आज आवश्यकता है।

प्रभावशाली कार्यपद्धति : जीवन के किसी भी क्षेत्र में विकास और कल्याण की संकल्पना का क्रियान्वयन सक्षमता के विभिन्न स्वरूपों पर निर्भर करता है। कई बार संसाधनों

की अधिकता को स्वयं की सक्षमता का आधार मानकर भ्रमपूर्ण स्थितियाँ निर्मित कर ली जाती हैं जिससे प्रायः गतिशील प्रवृत्ति पर संतोष के मनोभाव से स्थिरता का अंकुश लग जाया करता है। व्यावहारिक स्तर पर सक्षमता की अवधारणा का व्यापक लक्ष्य कार्य के प्रति संलग्नता और भागीदारी के माध्यम से आपसी जुड़ाव की भावना को विकसित करते हुए एक प्रभावशाली कार्यपद्धति का निर्माण करना होता है। जब किसी व्यवस्था के अन्तर्गत् कार्यरत् रहते हुए गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता के सम्बन्ध में विचार-विमर्श किया जाता है तब वहाँ एक परिणाममूलक कार्यप्रणाली की आवश्यकता होती है। सामान्य तौर पर सक्षमता के सम्बन्ध में किसी पूर्व निर्धारित अथवा स्थापित व्यवस्था और उससे सम्बद्ध विचारधारा की परिकल्पना का अनुमान लगाया जाता है जबकि यह एक गतिशील व्यवस्था का वास्तविक स्वरूप है। सैद्धान्तिक मनोवृत्ति का व्यावहारिक पक्ष जब सक्षमता के लिए प्रयासरत् रहता है तब यह एहसास हो जाता है कि विभिन्न स्थितियों के अन्तर्गत् प्रगति हेतु प्रभावशाली कार्यपद्धति का निरन्तर अनुगमन किया जाना आवश्यक है। यदि किसी क्षेत्र विशेष के संदर्भ में व्यवस्थागत् स्वरूप की व्याख्या की जाए तो वहाँ सक्षमता को क्रियान्वित करने की स्थिति परिणाममूलक कार्यप्रणाली के अन्तर्गत् निर्मित होती हुई प्रतीत होती है। किसी व्यक्ति अथवा व्यवस्था की सक्षमता का आँकलन किस आधार पर किया जा सकता है, इस अनसुलझे रहस्य को सुलझाने की कोशिश यह बताती है कि गुणात्मक एवं मात्रात्मक क्रम के साथ अभिवृद्धि करना एक सीमा तक सुदृण स्थिति को सक्षमता के रूप में स्वीकार करने का परिणाम होता है। सामाजिक विकास के परिदृश्य में प्रभावशाली कार्यपद्धति का सर्वाधिक लाभ यह होता है कि एक सुनिश्चित समयावधि के अन्तर्गत् निर्धारित किये गये लक्ष्य जो किसी परिणाम तक पहुँचने के लिये बनाये जाते हैं उन्हें व्यवस्थित तरीके से पूर्ण किया जा सकता है। विकास के विभिन्न क्षेत्रों के प्रति जब उत्तरदायित्व की स्थिति उत्पन्न होती है तब वहाँ सहजता एवं स्वतंत्रता के साथ कर्त्तव्य की पूर्णता तक परिणाम को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत कर देना कठिन हो जाता है। औद्योगिक परिवेश की परिणाममूलक कार्यप्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि प्रबन्धकीय क्रियाविधियों में मानव संसाधन विकास के लिए समुचित व्यवस्था की जाती है जिससे उत्पादन के विभिन्न संसाधनों का प्रबन्धन किया जा सके। संस्थागत् स्वरूप के अन्तर्गत् गुणात्मक परिणाम की प्राप्ति हेतु उद्देश्य के अनुरूप प्रभावी कार्यपद्धति का निर्माण करना विकास की प्रक्रिया को सुनिश्चित करने का महत्वपूर्ण आधार होता है, जिससे सक्षमता की वास्तविकता का बोध हो सके।

विधिवत् परीक्षण : संस्थागत् कार्य के व्यावहारिक आँकलन का आधार उसका समय-समय पर किया जाने वाला विधिवत् परीक्षण होता है जिसे निष्पादन मूल्याँकन के माध्यम से पूर्ण किया जा सकता है। सामान्य तौर पर संस्थागत् व्यवस्था के अन्तर्गत् जब व्यक्तिगत् अथवा सामूहिक कार्य के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार का अवलोकन और सुधार की स्थिति उत्पन्न होती है तब प्रायः इसका विरोध किया जाता है। स्वयं के द्वारा निर्धारित गतिशीलता के अनुसार कार्य सम्पादन किया जाना व्यक्तिगत् रूप से सहजता के साथ पूर्णता तक पहुँचने की प्रक्रिया है जिसमें दबावमुक्त व्यवस्था की अनुभूति होती है जबकि मूल्याँकन से जुड़ी किसी प्रक्रिया को स्वीकारना अंकुश का एक नियंत्रित स्वरूप होता है। सक्षमता का वास्तविक व्यवहार प्रत्यक्ष रूप से परिणाममूलक कार्यप्रणाली से सम्बद्ध होता है जिसमें निष्पादन मूल्याँकन के लिए पर्याप्त गुंजाईश होती है क्योंकि इसके बिना गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता हेतु कार्य करना संभव नहीं हो सकता है। व्यक्तिगत् रूप से सक्षमता के प्रति आन्तरिक दृष्टिकोंण कभी-भी अक्षमता को व्यक्त नहीं करता है क्योंकि स्वयं के संदर्भ में चुनौतीपूर्ण स्वीकारोक्ति सदैव सक्षमता की भूमिका में प्रस्तुत होना चाहती हैं। सामूहिक उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में जब प्रतिष्ठा की बात उठती है तब समूहगत् व्यवहार का स्वरूप सक्षमता को प्रकट करते हुए विभिन्न स्थितियों के अन्तर्गत् दावेदारी जताने की कोशिश करने लगता है। निष्पादन मूल्याँकन से गुणात्मकता के क्षेत्र में अभिवृद्धि का आशय व्यक्तिगत् अथवा समूहगत् व्यवस्था की कड़ी में उपलब्ध संसाधनों के द्वारा प्राप्त किये गये उद्देश्यों का विधिवत् परीक्षण करना है जिससे नवीन लक्ष्यों का निर्धारण करने के साथ आवश्यक संसाधनों की प्राप्ति और उसके उपयोग का पता लगाया जा सके। संस्थागत् कार्यप्रणाली में कई बार यह भी देखने में आता है कि जिस व्यक्ति या समूह को कार्य के दौरान एक निश्चित प्रमाप के दायरे में कार्य पूर्ण करने की आदत हो गई वह किसी नवीन व्यवस्था को उत्सुकता से स्वीकार नहीं करता है अथवा इसे बोझिलता से अपनाते हुए असंतोष एवं विरोध प्रकट करने का प्रयास करता है। कार्य सम्पादन और परिणाम की सुनिश्चितता परीक्षण के ऐसे महत्वपूर्ण घटक हैं जिनकी सहायता से गुणात्मक उत्पादन की प्रक्रिया में सहभागिता दर्ज करने वाले पक्ष अपनी सक्षमता के वास्तविक स्वरूप को पहचानते हुए निष्पादन मूल्याँकन को सम्पूर्ण विकास के संदर्भ में सहजता से स्वीकार कर लेते हैं। परीक्षण की विधिवत् प्रक्रिया जब तक दूसरों के हाथ में होती है तब तक भयपूर्ण स्थितियों का वातावरण बना रहता है लेकिन जैसे ही इस व्यवस्था में स्व-मूल्याँकन की तकनीक का उपयोग किया जाता है उसके पश्चात् गुणात्मक उत्पादन में भागीदारी के प्रति सम्पूर्ण दृष्टिकोंण परिवर्तित हो जाता है। सामान्यतः निष्पादन मूल्याँकन द्वारा अभिप्रेरित व्यवस्था, जिम्मेदारी को वहन करने के साथ नवीन चुनौतियों को सकारात्मक तरीके से स्वीकार करते हुए उस पर खरा उतरने का दावा भी करती है। सक्षमता का वास्तविक स्वरूप निष्पादन मूल्याँकन के प्रति अपनी निष्ठा को सदैव बनाये रखता है जिससे गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता को केवल परिणाम तक नहीं बल्कि व्यापक उपलब्धि के रूप में अपनाया जा सके।

उद्देश्यपरक गुणात्मकता : विकासात्मक परिदृश्य की विविधता के अन्तर्गत् सक्षमता का वास्तविक स्वरूप ज्ञात करने के लिए परिणाममूलक कार्यप्रणाली की तकनीक के साथ- साथ निष्पादन मूल्याँकन की व्यवस्था के प्रति सजगता से कार्य करने की आवश्यकता होती है। कार्य की पूर्णता हेतु किये जाने वाले प्रयास को अधिकाधिक स्वरूप में सक्षम बनाने के लिए यदि उद्देश्यपरक गुणात्मकता की अवधारणा को आत्मसात् किया जाए तो उपलब्धिपूर्ण परिणाम की प्राप्ति सुनिश्चित हो जाती है। उद्देश्यपरक गुणात्मकता से

संस्थागत् वातावरण को सकारात्मक बनाते हुए आपसी व्यवहार में तालमेल के द्वारा निर्धारित किये गये गुणात्मक उत्पादन के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। गुणात्मकता को कई बार विचार पक्ष के संदर्भ में देखने की कोशिश की जाती है और अन्ततः यह मान लिया जाता है कि 'गुणवत्ता प्रबन्धन' एक व्यावहारिक प्रणाली है जिसे दीर्घकालीन साख एवं समृद्धि के लिए अपनाया जाना चाहिए। सक्षमता का वास्तविक स्वरूप व्यक्तिगत् जीवन अथवा संस्थान में सदा गतिशीलता के व्यवहार में बना रहे इसके लिए उद्देश्यपरक गुणात्मकता के प्रति संवेदनशील होने की आवश्यकता है जिससे सकारात्मक छवि के ग्राफ में किसी भी प्रकार का उच्चावचन उत्पन्न नहीं हो सके। मनोवैज्ञानिक अध्ययन सक्षमता को प्रमाणिक तरीके से व्यक्त करते हैं जिसमें गुणात्मक उद्देश्य की अवधारणा और उससे जुड़े भावनात्मक पक्ष को व्यक्तिगत् एवं सामूहिक रूप से कार्य की निरन्तरता हेतु मनःस्थिति के अन्तर्गत् स्थापित करते हुए व्यावहारिक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। उद्देश्यपरक गुणात्मकता का यथार्थ स्वरूप जब मानवीय सक्षमता की वास्तविकता को प्रकट करता है तब उपलब्धियों के कई कीर्तिमान स्थापित हो जाते हैं क्योंकि गुणवत्ता से युक्त अन्तःकरण क्रियान्वयन की भूमिका में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने में समर्थ होता है। व्यवस्थागत् कार्यप्रणाली में उद्देश्यपरक गुणात्मकता को सम्मिलित कर देने से कार्य संपादन से जुड़ी विभिन्न गतिविधियाँ अभिप्रेरित अवस्था में परिणित हो जाती हैं जिससे परिणाममूलक व्यवस्था के साथ गुणवत्ता के प्रति सजग मनोवृत्ति का सहजता से विकास हो जाता है। सामान्य दृष्टि के साथ-साथ व्यावहारिक रूप से गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता के लिए आधारभूत प्रयास को किसी भी स्थिति में अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसके अन्तर्गत् परिणाममूलक कार्यप्रणाली और निष्पादन मूल्याँकन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण दस्तावेजों का समावेश होता है। उद्देश्यपरक गुणात्मकता के संदर्भ में वास्तविक रूप से सक्षमता को कैसे पहचाना जाए? तथा किस व्यवस्था को सक्षम मान लिया जाए? अथवा सक्षमता के स्वरूप को कैसे बढ़ाया जाए? तथा किन स्थितियों में सक्षमता का आँकलन किया जाए? इत्यादि प्रश्नों की उत्पत्ति और उसका व्यावहारिक समाधान व्यक्तिगत् अथवा संस्थागत् पक्ष को अधिक मजबूती प्रदान करते हैं। सक्षमता का व्यापक स्वरूप जब अपनी भूमिका का निर्वहन सम्पन्न करता है, तब विभिन्न प्रकार की विधिवत् व्यवस्थाओं को आत्मसात करने के पश्चात् भी सम्पूर्णता का परिदृश्य परिलक्षित नहीं होता है क्योंकि गुणात्मकता की कसौटी पर 'कुछ न कुछ शेष' रह ही जाता है। उद्देश्यपरक गुणात्मकता की व्यवहारगत् अवधारणा का क्रियान्वयन जहाँ एक ओर सक्षमता की वास्तविकता तक पहुँचने का अवसर प्रदान करता है वहीं परिणाममूलक कार्यप्रणाली विकसित करते हुए गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता को निष्पादन मूल्याँकन के द्वारा निर्धारित भी कर देता है।

नियोजित व्यवस्था: प्रबन्धकीय व्यवस्था और उससे जुड़ी अनिवार्यताओं की विवेचना जब समग्रता के संदर्भ में की जाती है तब व्यवस्थागत् नियोजन की पूर्णता संभव हो पाती है। कई बार जीवन की असाधारण अवस्था का सहज बोध सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं कृतित्व के परिमार्जन का सक्षम आधार बन जाया करता है जिसमें किसी विशिष्ट ज्ञान तथा चिन्तन की आवश्यकता नहीं होती है। पुरूषार्थ के द्वारा सक्षमता के वास्तविक स्वरूप तक पहुँचने के लिए गतिशील मनोवृत्ति को अपनाना होगा तभी अतीत की स्मृतियों एवं वर्तमान में बुने गये मकड़जाल से बाहर निकलकर भविष्य के पूर्व निर्धारित विकल्पों से मुक्त हुआ जा सकता है। व्यावहारिक तौर से जीवन में निपुणता हासिल कर लेना सक्षमता के वास्तविक स्वरूप का महत्वपूर्ण उदाहरण होता है जिसके अन्तर्गत् परिणाममूलक कार्यप्रणाली तथा निष्पादन मूल्याँकन के द्वारा विधिवत् परीक्षण की व्यवस्था का अनुपालन करते हुए गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता निर्धारित की जाती है। सामान्यतः व्यक्तिगत् जीवन से लेकर सामाजिक परिवेश से सम्बद्ध मानवीय अन्तःकरण अपनी मनःस्थिति को विभिन्न प्रकार के बन्धनों तथा अवसाद के वातावरण में दुःख, अभावग्रस्तता, हृदय विदारक घटना, पीड़ा और संघर्ष की विविध परिस्थितियों के मध्य स्वयं को घिरा हुआ पाता है। सक्षमता का वास्तविक स्वरूप विरोधाभासी परिस्थितियों से जूझने की शक्ति प्रदान करता है जो व्यक्ति को धन, बल, बुद्धि, विवेक, सामाजिकता एवं अध्यात्म के गूढ़ रहस्यों से परिचित कराता है जिससे सेवा, संघर्ष एवं समर्पण के वास्तविक यथार्थ को अनुभूति के स्तर पर समझा जा सके। विभिन्न व्यवस्थाओं के अन्तर्गत् नियोजन की विचारधारा सक्षमता के साथ गतिशील होती है जिसमें व्यक्तिगत् और सामूहिक परिदृश्य की स्थितियाँ सहभागितापूर्ण आचरण की अपेक्षा के साथ गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता को व्यावहारिक रूप से स्वीकार करने के लिए सदैव तत्पर रहती हैं। आज जीवन के विविध पक्षों पर कार्य करते हुए सक्षमता के वास्तविक स्वरूप तक पहुँचना कठिन होता जा रहा है, क्योंकि जब सक्षमता से साक्षात्कार के सुखद संयोग निर्मित होते हैं तब कभी-कभार संवेदनाओं पर कुठाराघात होने की स्थितियाँ भी उत्पन्न हो जाया करती हैं। यदि संस्थागत् प्रयास के द्वारा सक्षमता का वास्तविक स्वरूप व्यक्तिगत् और सामूहिक स्थितियों में प्रकट होता है तो निश्चित ही वहाँ परिणाममूलक कार्यप्रणाली को व्यावहारिक रूप से क्रियान्वित करने की बात पूर्णतः स्वीकार की गयी होगी जिससे गुणात्मक उत्पादन को सुनिश्चित किया जा सके। व्यवस्थागत् परिवेश के अन्तर्गत् उद्देश्यपरक गुणात्मकता को आधार बनाकर जब विधिवत् परीक्षण के लिए निष्पादन मूल्याँकन की तकनीक का प्रयोग किया जाता है तब परिणाम की व्यापकता अपने सार्थक स्वरूप में परिलक्षित हो जाया करती है। सामाजिक परिवेश में सक्षमता के वास्तविक स्वरूप को मानवता की पक्षधरता से जोड़कर देखा जाता है जहाँ गुणात्मक उत्पादन की सुनिश्चितता के लिए किसी भी प्रकार का अन्तर्द्वन्द नहीं होता है। किसी व्यक्ति अथवा व्यवस्था में सक्षमता का वास्तविक प्रतिबिम्ब दिखाई नहीं देने का मुख्य कारण सही निर्णयन का अभाव है जो आन्तरिक एवं बाह्य द्वन्द की स्थिति का परिणाम होता है। अतः नियोजित व्यवस्था के प्रति पूर्ण आस्था रखते हुए वैश्विक जगत् की परिवर्तनशील चुनौतियों के लिए मानव संसाधन विकास की संरचना का निर्माण गुणवत्ता प्रबन्धन के सम्पूर्ण आयाम को उत्पादकता के संदर्भ में क्रियान्वित करने की नीति द्वारा ही सक्षमता का वास्तविक स्वरूप साकार किया जा सकता है।

उम्मीद

डॉ. अलका यतींद्र यादव
स्वतंत्र लेखन
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

बचपन में हम देखते थे कि घर के पुरुषों के बाहर जाने पर घर की महिलाएं कभी किवाड़ तुरंत बन्द नहीं करती थी, सांकल खुली छोड़ देती थीं। कभी कभी पुरुष कुछ दूर जाकर लौट आते थे, ये कहते हुए कि कुछ भूल गया हूं और मुस्कुरा देते थे दोनों एक दूसरे को देखकर।

एक बार बच्चे ने अपनी मां से पूछ लिया कि मां पापा के जाने के बाद कुछ देर तक दरवाजा क्यों खुला रखती हो??

तब मां ने बच्चे को वो गूढ़ बात बताई जो हमारी सांस्कृतिक विरासत है। उन्होंने बच्चे को कहा कि किवाड़ की खुली सांकल किसी के लौटने की एक उम्मीद होती है। अगर कोई अपना हमसे दूर जा रहा है तो हमे उसके लौटने की उम्मीद नहीं छोड़नी चाहिए। उसका इंतजार जीवन के आखिरी पल तक करना चाहिए।

आस और विश्वास से रिश्तों की दूरी मिट जाती है, इसीलिए मैं दिल की उम्मीद के साथ दरवाजे की सांकल भी खुली रखती हूं, जब भी वापस आए तो उसे खटकाने की जरूरत नहीं पड़े, वो खुद मन के घर में आ जाए।

जीवन में कुछ बातें हमेशा हमे सीख देती है, कि कोई रिश्तों से नाराज कितना भी हो, उसके लिए दिल के दरवाजे बन्द मत करो। जब कभी उसे आपकी याद आयेगी, उसे आपके पास आना हो तो वो हिचके नही, मस्ती में पूरे विश्वास से बिना कुंडी खटकाए दिल के अन्दर आ जाए।

प्रभु राम और आज के युग में उनकी अपरिहार्यता

विरेंदर 'वीर' मेहता
लेखन विधा : लघुकथा, कहानी, गीत एवं समीक्षा
दिल्ली

सनातन धर्म को हिन्दू धर्म की सबसे सशक्त कड़ी माना जाता है, जिसका पूर्ण आधार ईश्वर–अवतार की उस परिकल्पना पर आधारित है जिसमें सृष्टि–पालनहार के कुल २४ अवतार माने गए हैं। इन्हीं अवतारों में सर्वश्रेष्ठ माने जाने वाले भगवान विष्णु के दस अवतारों में एक हैं प्रभु श्री राम का मानव अवतार जिन्हें सनातन धर्म में सर्वाधिक आराध्य देव माना गया है। भले ही प्रभु श्री राम के अस्तित्व पर बहुत से मतभेद रहे हों लेकिन फिर भी हम आज के आधुनिक और पुरानी मान्यताओं को पीछे छोड़ तेजी से आगे बढ़ते संसार में किसी आदर्श मानव की संकल्पना पर विचार करें तो निःसन्देह वह श्री राम ही होंगे।

आज के विपरीत समय में आपसी सम्बन्धों में अल्प प्रेम भावना, बढ़ती कटुता, छल–प्रपंच एवं अनीति की व्यापकता निरंतर बढ़ती जा रही है और समाज में बनी मान्यताएं, संस्कार स्वतः ही तहस–नहस हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में सहज ही मन कह उठता है कि इस दिगभर्मित संसार को आवश्यकता है एक ऐसे चरित्र नायक की जो अंधकार में उजाले की किरण दिखाने का कार्य कर सके। वह केवल ईश्वर का प्रति रूप ही नहीं, एक साधारण मानव के रूप में भी श्रेष्ठता का उदाहरण हो। और निःसन्देह वह श्रीराम के अतिरिक्त कौन होगा जिन्होंने अपने व्यक्तित्व के द्वारा, आदि से अंत तक धर्म के श्रेष्ठ बिंदुओं की सही व्याख्या की। उनकी संपूर्ण जीवन कथा में चाहे वह बाल लीला हो, शिक्षा काल हो, वनवासी जीवन हो या कांटों भरे मार्ग पर अपनी भार्या के विरह के क्षण हों, उन्होंने हर स्थिति में अपने चरित्र और व्यवहार द्वारा आदर्श ही स्थापित किए हैं। और उनके 'अयोध्या राज' में उनके द्वारा स्थापित आदर्श तो एक किवदन्ति बन ही चुके हैं।

बहरहाल यदि हम उनके कुछ आदर्शों की चर्चा करें तो सर्वप्रथम उनके बाल रूप के एक घटनाक्रम को देख सकते हैं कि कैसे श्री राम अपने बाल सखाओं के साथ जब क्रीड़ा में व्यस्त होते हैं और माता कौशल्या उन्हें जबरन भोजन के लिए ले जाना चाहती हैं तो वह अकेले चलने के लिए तैयार नहीं होते और जिद करते हैं कि वह बिना किसी भेदभाव के अपने सभी मित्रों के साथ ही भोजन करेंगे। उनकी इस बाल सुलभ लेकिन विलक्षण जिद को अंततः माँ की स्वीकृति मिल जाती है और 'बंधु सखा संग लेहि बोलाई और अनुज सखा संग भोजन करही' के क्रमानुसार उनका यह नित्य का नियम बन जाता है। भेदभाव और समानता की दिशा में श्री राम का यह पहला चरण था, जो आज भी समाज में उतनी ही महत्ता रखता है, जितनी उस युग में!

त्रेता काल में ब्रह्मऋषि वशिष्ठ और राजऋषि विश्वामित्र दोनों के परस्पर विरोध को उस समय लोकहित–संदर्भ में एक अहम प्रश्न माना गया था। लेकिन अपने शिक्षण के दौरान श्रीराम द्वारा अपने दोनों गुरुजनों (गुरु वशिष्ठ जिनसे शास्त्र विद्या ली और ऋषि विश्वामित्र जिनसे शस्त्र विद्या ली) को यथोचित सम्मान देने के साथ उन्हें एक सूत्र में जोड़ने का जो उदाहरण स्थापित किया गया, वह अतुलनीय था और आज के दौर में जब गुरु– शिष्य की परंपरा लगभग समाप्ति के दौर में है, उनका यह सूत्र एक प्रेरणा का अध्याय बन सकता है।

अहिल्या निर्दोष थी। लेकिन इसके बावजूद उनके साथ न्याय नहीं हुआ, वरन उनके पति गौतम ने उनका परित्याग करके उन्हें पाषाण हो जाने का श्राप दिया। एक लंबे समय के इस त्रासदी भरे जीवन से मुक्त करने वाले कोई थे, तो वह थे श्री राम। भले ही आज के युग में ये चारित्रिक उदाहरण अतीत की बात कही जाए लेकिन एक नारी के प्रति अत्याचार आज भी बदस्तूरत जारी है, और आज भी समाज को ऐसे 'राम–छवि' वाले देव पुरुषों की जरूरत है जो नारी के प्रति होने वाले अत्यचारों को मिटाने के लिए आगे आएं।

राम–रावण के बीच हुए युद्ध के अंत में रावण के अंतिम क्षणों में विजेता राम का अपने अनुज लक्ष्मण को लंका नरेश के पास ज्ञान प्राप्ति के लिए भेजने का दृष्टांत उस युग की एक विलक्षण घटना है जो युगों–युगों में यदा कदा ही घटित होती है। अपने दुश्मन को भी सम्मान देने की यह परंपरा आज के दौर में उन लोगों के लिए एक ऐसा प्रेरक बिंदु बन सकता है जो अपने प्रतिद्वंदी को सम्मान देने के नाम पर असफल होते नजर आते हैं।

वस्तुतः यदि समग्र रूप से इन बातों पर चिंतन किया जाए तो यह निश्चित है कि भले ही चमत्कारिक रूप से सामाजिक परिवर्तन न हो लेकिन एक उज्ज्वल सुबह की शुरुआत अवश्य हो सकती है। बस आवश्यकता है एक शुभारम्भ की. . . !

जय श्री राम।

बिना दुरी तय किये हुए कही दूर आप नहीं पहुंच सकते।

जैसा देश वैसा भेष

सोनल मंजू श्री ओमर
राजकोट, गुजरात

'हे शेफाली! गुड मॉर्निंग! हैप्पी बर्थडे वन्स अगेन! ओह्ह माय गॉड! स्लीवलेस विथ स्ट्रैप्स वन पीस ड्रेस! यु लुकिंग सो हॉट एंड हैपनिंग!'

'थैंक यू सो मच इशिता!'

'पर आज तू जल्दी अश्वफिस जा रही है क्या?'

'नहीं यार! आज बर्थडे है तो सोचा पहले मंदिर हो लूं, वहाँ कुछ देर रुककर वहीं से ऑफिस निकल जाऊंगी।'

'तू ऐसे मंदिर जाएगी तब तो सब भगवान को छोड़कर तुझे ही देखेंगे!' इशिता ने चुटकी लेते हुए कहा।

'अगर सब भगवान को छोड़कर मुझे देखेंगे तो इसमें मैं क्या कर सकती हूँ। चल अब मैं चलती हूँ। बाय!'

पूजा की सामग्री लेकर जैसे ही शेफाली मंदिर में प्रवेश करती है उसे मंदिर के पुजारी टोक देते हैं, 'ठहरो! आप मंदिर में प्रवेश नही कर सकती।'

'क्यों नही कर सकती?' शेफाली ने आश्चर्य से प्रश्न किया।

'आपने अपने वस्त्र देखे हैं? इन वस्त्रों में आप मंदिर में प्रवेश नही कर सकती।'

'आप कौन होते है मुझे मेरे कपड़ो के बारे में ज्ञान देने वाले। मैं कुछ भी पहनूं मेरी मर्जी। मैं जो चाहूँ वो पहन कर भगवान की पूजा करूँ, आप कौन होते है मुझे रोकने वाले? भगवान पर सिर्फ आपके हक नही है, भगवान हम सब के भी है।'

'देखिए देवी जी! न तो मैं आपको कोई ज्ञान दे रहा हूँ और न ही भगवान पर हक जता रहा हूँ। आप पूरी तरह स्वतंत्र है कुछ भी पहनने के लिए, लेकिन मैं इस मंदिर का पुरोहित हूँ और मैं आपको इन वस्त्रों में मंदिर में प्रवेश की अनुमति नही दे सकता। इसीलिए अच्छा होगा आप बिना हंगामा किए यहाँ से चली जाइये, और यदि आपको पूजन करना है तो कृपया हमारी संस्कृति के अनुरूप वस्त्र धारण कर के आइए।'

'अरे क्या हुआ शेफाली? तू वापस क्यों आ गई और इतने गुस्से में क्यों है?' रूम में शेफाली को गुस्से में तमतमाते हुए आता देख रूममेट इशिता ने पूछा।

'पूछ मत यार! वो मंदिर का पुजारी, अपने आप को समझता क्या है? मुझे कहता है कि मैं इन कपड़ो में मंदिर के अंदर नही जा सकती, और अगर जाना है तो कपड़े बदल कर आओ नही तो वो मुझे अनुमति नही देगा! अनुमति माय फुट!'

'तो कोई बात नही शेफाली। तू कपड़े बदल के चली जा।'

'मैं क्यों उसकी घटिया सोच के कारण अपने कपड़े बदलूँ? वो उस मंदिर में नहीं आने देगा तो क्या हुआ? और भी मंदिर है, सबमें तो जाने से नही रोक सकता ना?'

'हाँ और भी मंदिर है शेफाली, लेकिन उन्होंने जो कहा वो पूरी तरह गलत तो नही था ना!'

'तू भी इशिता? उसकी साइड ले रही है!'

'मैं किसी की साइड नही ले रहीं हूँ शेफाली। तू खुद जरा ठंडे दिमाग से सोच और बता कितने सारे ऐसे पब और क्लब है जहाँ पर इंडियन ड्रेसस अलाउड नही है फिर भी तू उनके रूल के अकॉर्डिंग ड्रेसअप होती है। ऑफिस में फॉर्मल कपड़े का रूल होता है उसे भी तू फॉलो करती है। गुरुद्वारे में बिना सिर ढके अंदर जाने नही दिया जाता तो उसे भी तू मानती है। जब इन सब जगह तू बिना कोई प्रश्न किए सब मान लेती है तो फिर तुझे आज पुजारी जी की बात से प्रॉब्लम क्यों हो रही है? हमें जगह और परिस्थिति के अनुसार ही अपनी वेशभूषा रखनी चाहिए। इसीलिए तो कहा जाता है जैसा देश वैसा भेष! चल अब गुस्सा छोड़, मैं अलमारी से तेरे लिए एक बढ़िया-सी सलवार कमीज निकाल रहीं हूँ। जल्दी से तैयार हो जा, फिर मैं भी तेरे साथ मंदिर चलती हूँ।'

शेफाली कपड़े बदलकर आती है और दोनों मंदिर चल देते हैं। 'पंडित जी! ये मेरी दोस्त हैं शेफाली। आज इसका बर्थडे है। इसके नाम की पूजा कर दीजिए।'

'जरूर बिटिया।' पुजारी जी ने मुस्कुराकर कहा।